"माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के निर्णय शैली का अध्ययन"

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की मास्टर ऑफ एजुकेशन उपाधि की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत

लघुशोध प्रबन्ध

शोध निर्देशक
(डॉ० अमरनाथ दत्त गिरी)
रीडर, अध्यापक शिक्षा विभाग

शोधकर्ता
(राजीव सिंह)
एम०एस०सी० (वनस्पति शास्त्र)
बी०एड०

अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
अतर्रा (बाँदा)

सत्र : 2007-08

"माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यो के निर्णय शैली का अध्ययन"

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की मास्टर ऑफ एजुकेशन
उपाधि की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत

लघुशोध प्रबन्ध

शोध निर्देशक
(डॉ0 अमरनाथ दत्त गिरी)
रीडर, अध्यापक शिक्षा विभाग

शोधकर्ता
(राजीव सिंह)
एम0एस0सी0 (वनस्पति शास्त्र)
बी0एड0

अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
अतर्रा (बाँदा)

सत्र : 2007-08

अनुक्रमणिका

तालिका सूची

अध्याय-प्रथम

समस्या की पृष्ठभूमि

1.1 प्रस्तावना

1.2 अध्ययन की समस्या

1.3 निर्णय प्रक्रिया की अवधारणा

1.4 समस्या कथन

1.5 अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

1.6 अध्ययन के उद्देश्य

1.7 अध्ययन की परिकल्पनाएँ

1.8 अध्ययन में प्रयुक्त विशिष्ट शब्द का परिभाषीकरण

1.9 अध्ययन की परिसीमाएँ

1.1 प्रस्तावना

प्रत्येक समाज अपने सदस्यों की शिक्षा का दायित्व स्वयं अपने ऊपर लेता है। वह इस दायित्व का निर्वाह अनेक प्रकार के शिक्षा साधनों से पूरा करने का प्रयास करता है। विद्यालय भी इसी दायित्व को पूरा करने का साधन है। जान डी.वी. ने लिखा है कि ''विद्यालय अपनी चाहारदीवारी के बाहर वृहद समाज का प्रतिबिम्ब है जिसमें जीवन को जीवन व्यतीत करके सीखा जा सकता है, परन्तु यह एक शुद्ध सरलीकृत तथा उत्तम रूप में समाज होगा।'' समाज में विद्यालय का स्थान, महत्व और आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए एस. बाल कृष्ण जोशी ने लिखा है कि ''किसी भी राष्ट्र की प्रगति का निर्माण विधान सभाओं, न्यायालयों और फैक्ट्रियों में नहीं वरन विद्यालयों में होता है।'' वास्तव में व्यक्ति और समाज दोनों की प्रगति के लिए विद्यालय अतिआवश्यक है। इसलिए किसी भी समाजिक ढांचे में इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

विद्यालय संगठन वह संरचना है जिसमें शिक्षक, छात्र, प्रधानाध्यापक, परिनिरीक्षक तथा अन्य व्यक्ति विद्यालय की क्रियाओं को चलाने के लिए मिलकर कार्य करते हैं। शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समस्त उपलब्ध भौतिक तथा मानवीय तत्वों की समुचित व्यवस्था करना तथा विभिन्न विद्यालयी तत्वों में सामन्जस्य तथा समन्वय स्थापित करना अनिवार्य हैं, जिसके लिये प्रधानाध्यापक उत्तरदायी होता है। शिक्षण के क्षेत्र में प्रधानाध्यापक नेतृत्वकर्ता होता है। इस क्षेत्र में उसे छात्र–छात्र,

शिक्षक–छात्र, शिक्षक–शिक्षक, शिक्षक–निरीक्षक, शिक्षक–अध्यापक आदि के सम्बन्धों को संतुलित एवं निरीक्षित करना पडता है। इन समस्त प्रकार के सम्बन्धों पर उसके व्यक्तित्व की अमिट छाप पडती है। प्रधानाध्यापक के शिक्षा सम्बन्धी ज्ञान के ऊपर ही सम्पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम की उन्नति एवं सफलता निर्भर है। यदि वह प्रचलित शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तों एवं प्रयोगों से स्वयं को अवगत नहीं कराता है अथवा उसे उनका व्यवहारिक ज्ञान नहीं है तो वह अपने शिक्षकों या साथियों का शिक्षण के क्षेत्र में नेतृत्व नहीं कर सकता है।

प्रधानाध्यापक विद्यालय का ही नेता नहीं वरन्, समाज का भी नेता होता है। विद्यालय एक सामाजिक संस्था है, जिसको समाज का आदर्श रूप प्रस्तुत करना चाहिए। नेता होने के कारण उसके लिए आवश्यक है कि वह विद्यालय को समाज के निकट ले जाय और समाज को विद्यालय में लाये। अतः प्रधानाध्यापक वह कडी है जो विद्यालय तथा समाज में मधुर सम्बन्ध स्थापित कराता है। प्रधानाध्यापक को महत्वपूर्ण कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए अनेक प्रकार की समस्याओं से सामना करना पडता है और समस्याओं के निराकरण के लिए निर्णय लेना पडता है जो एक बहुत ही कठिन कार्य है। निर्णय लेना संस्था अथवा विद्यालय का महत्वपूर्ण कार्य है। विद्यालय कार्य के प्रत्येक क्षेत्र में निर्णय की आवश्यकता होती है। यदि यह सोचा जाय कि निर्णय के बिना संगठन के कार्य चल सकते हैं तो यह असम्भव है। इस अध्ययन में गहन विचारोपरान्त साइमन (1956) प्रबन्ध और निर्णय को एक ही रूप में समझा है और कहा है कि ''निर्णयन प्रबन्ध

की पर्यायवाची है"। एक अन्य प्रबन्ध विचारक कोपलैण्ड के विचार से प्रशासन मुख्यतः निर्णय लेने की प्रक्रिया है तथा अधिकार निर्णय लेने और यह देखने का कि उसके अनुसार कार्य हो रहा है या नहीं, उत्तरदायित्व है। शिक्षा अथवा व्यवसाय में उपक्रम बड़ा या छोटा हो उसकी परिस्थितियों में परिवर्तन होता रहता है तथा समय--समय पर अनेक तरह की घटनाएं घटित होती रहती है, किन्तु उपक्रम के चक्र को जारी रखने तथा उसकी क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए निर्णय लेने अनिवार्य होते हैं। प्रत्येक उपक्रम या विद्यालय का निर्माण किन्हीं विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। उन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये यह आवश्यक है कि निर्णय व्यवहारिक एवं प्रभावकारी हो। निर्णयन विशिष्ट समस्या के समाधान के लिये विकल्पों में से सर्वोत्तम विकल्प चुनने की विधि है। अच्छे निर्णयों पर संस्था की सफलता निर्भर है। निर्णय लेने की शैली पर संस्था की सफलता निर्भर है। निर्णय लेने की शैली को ठीक प्रकार अपनाकर वैज्ञानिक ढंग से उचित समय पर निर्णय लेने वाला प्रशासक अथवा प्रबन्धक कुशल माना जाता है। जब हम अपने देश की संस्थाओं को देखते हैं और संस्थाओं को संचालित करने वाले प्रबन्धकों तथा प्रशासकों के कार्य करने के ढंग की ओर नजर डालते हैं तो हम पाते हैं कि हमारी अधिकांश संस्थाएं ठीक प्रकार से नहीं चल रही है तथा वे अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में पूर्णतया सफल नहीं है। सस्था किसी भी प्रकार की हो आये दिन कोई न कोई समस्या, किसी न किसी प्रकार की कठिनाई सर्वत्र देखने को मिलती है। पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि,

पाठ्यसहगामी क्रियाएं, शिक्षकों, कर्मचारियों तथा अधिकारियों के व्यवहार भौतिक तथा शैक्षिक सुविधाएं आदि ऐसे पहलू हैं जिनको लेकर अक्सर छात्रों तथा शिक्षकों में असंतोष देखने को मिलता है। इस असन्तोष के कारण संस्था के क्रियाकलाप बाधित होते हैं। परिणामस्वरूप संस्था मानव संसाधन विकास के अपने मूल लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाती। इस कारण उन पर लगाये गये धन तथा साधनों का अपव्यय होता है।

शिक्षा संस्था में प्रधानाध्यापक, शिक्षक, विद्यार्थी एक–दूसरे से जुड़े होते हैं। इनकी अन्तःक्रिया से संस्था के कार्य सम्पादित होते हैं। प्रायः देखा जाता है कि जब कभी कोई समस्या उत्पन्न होती है तो उसके समाधान के लिए प्रधानाध्यापक की ओर देखा जाता है क्योंकि हमारी शिक्षा व्यवस्था में प्रधानाचार्य ही अधिकारयुक्त जिम्मेदार माना गया है।

किसी समस्या के समाधान में उनका निर्णय ही महत्वपूर्ण होता है। उसका निर्णय महत्वपूर्ण एवं मान्य भी होना चाहिए क्योंकि वह संस्था की ऐसी धुरी है जिस पर संस्था का चक्र घूमता है। किन्तु यह पाया गया कि सभी प्रधानाचार्य निर्णय लेने में कुशल नहीं होते और उनकी अकुशलता शिक्षकों तथा छात्रों तथा कभी–कभी अभिभावकों में असंतोष की कारण बन जाती है। प्रधानाध्यापक को महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए अनेक प्रकार की समस्याओं से सामना करना पडता है और समस्याओं के निराकरण के लिए निर्णय लेना पड़ता है जो एक बहुत ही कठिन कार्य है।

विद्यालय के प्रधानाचार्य को प्रतिदिन छोटे–बड़े अनेक निर्णय लेने पडते हैं। यदि निर्णय ठीक तरह से समस्या के सभी पहलुओं को ध्यान में

रखकर लिया गया है तो उसके परिणाम सभी को अच्छे प्राप्त होते हैं किन्तु यदि कोई प्रशासक समस्या के विभिन्न पहलुओं पर बिना विचार किये निर्णय ले लेता है तो उसका परिणाम न केवल उस सस्था अथवा सगठन को भुगतना पड़ता है जिसमें वह प्रशासक के रूप में कार्य कर रहा है, वरन उससे समूची कार्य प्रणाली प्रभावित हो जाती है और समस्या का समाधान करने के स्थान पर अन्य अनेक नवीन समस्याएं उत्पन्न हो जाती है। अतः प्रशासक के रूप में विद्यालय के प्रधानाचार्य को निर्णय लेने की प्रक्रिया में दक्ष होना चाहिए। प्रधानाचार्य को चाहिए कि वह निर्णय लेने के पूर्व समस्याओं के प्रत्येक पहलू पर गहराई से विचार करें और समस्या के विश्लेषण के आधार पर ही कोई निर्णय लेवें।

निर्णय लेने का अर्थ किसी राय पर क्रिया करने के पूर्व रूपरेखा तैयार करना अथवा मस्तिष्क में किसी कार्य को करने की योजना तैयार करना है। प्रायः निर्णय तभी लिये जाते हैं जब सामने समस्या हो और जिसके कारण कार्य करने में बाधा उत्पन्न हो रही हो। निर्णय लेने की पद्धति विद्यालय के खराब स्थिति को सुधार सकती है और प्रायोगिक नयी पद्धतियों के लिए वातावरण तैयार करने में सहायक एवं विद्यालय के धनात्मक विकास में सहायक होती है।

निर्णय लेने की शैली को बहुत से कारक हैं जो प्रभावित करते हैं वे विद्यालय में अथवा विद्यालय के बाहर क्रियाशील होते हैं।

इस प्रकार प्रधानाचार्य को निर्णय लेने की शैली में विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये समस्याएं वित्तपोषित तथा

वित्तविहीन माध्यमिक विद्यालयों में अलग–अलग रूप में प्रधानाचार्य के सामने आती हैं जो प्रधानाचार्य के निर्णय शैली को प्रभावित करती हैं।

प्रधानाचार्यों द्वारा विभिन्न प्रकार की समस्याओं पर निर्णय लेने की शैली का अध्ययन शोध छात्र ने शोध विषय में लिया है।

1.2 अध्ययन की समस्या

प्रत्येक विद्यालय निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करता है। संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रधानाध्यापक, शिक्षक, छात्र–छात्राओं तथा कर्मचारियों को कई तरह के कार्यों का सम्पादन करना होता है। इन विविध कार्यो के सम्पादन हेतु नीतियाँ बनानी पड़ती हैं और उनके क्रियान्वयन के लिए ठोस कदम उठाने पड़ते हैं। विद्यालय के सभी कार्य सुचारू रूप से चले तथा निश्चित समय पर उनके परिणाम विद्यालय को प्राप्त हो इसके लिए प्रधानाध्यापक को अनेक निर्णय पड़ते हैं। ये निर्णय प्रधानाध्यापक की योग्यता, मानसिकता, अनुभव तथा प्रशिक्षण पर निर्भर होते हैं जो प्रधानाचार्य यह समझते हैं कि विद्यालय का प्रधान होने के नाते सारे निर्णय लेने का अधिकार उसी के पास है तो वह शिक्षकों, विद्यार्थियों तथा अन्य कर्मचारियों की परवाह नहीं करता और वह ऐसे निर्णय लेता है, जिसे वह अपने विचार से ठीक समझता है चाहे उसका प्रभाव कैसा ही हो। किन्तु जो प्रधानाचार्य यह मानते हुए कि वह विद्यालय का प्रधान अवश्य है किन्तु विद्यालय के कार्यों का संचालन वह स्वयं नहीं करता बल्कि शिक्षक, शिक्षार्थी तथा अन्य कर्मचारी भी विद्यालय के कार्यों को

सम्पादित करते हैं और तभी विद्यालय अपने उद्देश्यों को प्राप्त करता है। यदि वह सही और मान्य प्रक्रिया के अन्तर्गत निर्णय लेता है तो वह अपने कार्यों में सफल होता है तथा विद्यालय निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करता है और विद्यालय के सभी वर्ग के लोग संतुष्ट होते हैं क्योंकि विद्यालय में अपनायी जाने वाली निर्णय शैली में सहभागिता के कारण उनका मनोबल ऊँचा रहता है। इसके विपरीत सुविचारित निर्णय शैली का अनुसरण न करने वाले प्रधानाध्यापक को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा निर्णय में शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं कर्मचारियों की सहभागिता न होने के कारण वे सदैव असन्तुष्ट रहते हैं उनमें कुण्ठा होती है जिस कारण विद्यालय निर्धारित उद्देश्यों को नहीं प्राप्त कर पाते हैं।

प्रधानाध्यापक के निर्णय की सफलता या असफलता उसके द्वारा अपनायी गई शैली, विधि तथा निर्णय सिद्धान्तों के ज्ञान पर निर्भर करता है। प्रबन्ध शास्त्रियों ने अनेक निर्णयन शैलियों, विधियों तकनीकों तथा सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है और निर्णय प्रक्रिया के अनेक पद एवं चरण बतायें है। उन्होंने निर्णय प्रक्रिया के विभिन्न तत्वों तथा कारकों का भी पता लगाया है। एक निर्णयकर्ता को चाहे वह प्रबन्धक हो या प्रशासक अथवा विद्यालय का प्रधानाध्यापक, निर्णय प्रक्रिया की विभिन्न शैलियों, विधियों, सिद्धान्तों, तत्वों तथा चरणों अथवा पदों की सम्यक जानकारी आवश्यक है। ऐसा होने पर निर्णय सही निर्णय माना जायेगा और सफल निर्णयकर्ता समझा जायेगा।

1.3 निर्णय प्रक्रिया की अवधारणा

संगठन को चलाने के लिए प्रशासन अथवा प्रबन्धक को अक्सर अनेक तरह के निर्णय लेने पड़ते हैं। पीटर ड्रकर (1970) के अनुसार प्रबन्धक जो कुछ भी करता है, निर्णयों के द्वारा ही करता है।

'निर्णय' का शाब्दिक अर्थ है, पूर्ण निश्चय करना।

पीटर ड्रकर (1970) के अनुसार यह विभिन्न विकल्पों के बीच चुनाव है। अतः स्पष्ट है कि निर्णय लक्ष्य तक पहुँचने का एक साधन है। यह किसी कार्य को करने का निर्धारण करता है। यह किसी व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है जिसका चयन अनेक सम्भव विकल्पों में से किया जाता है। निर्णय धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों हो सकते हैं जो संस्था के हित अथवा अहित में हो सकते हैं। निर्णय प्रत्येक काल की घटनाओं को किसी न किसी तरह से प्रभावित करता है। निर्णयों का किसी कार्य, व्यवहार अथवा उपक्रम की सफलता अथवा असफलता पर बहुत प्रभाव पड़ता है। उनके अनुसार 'चुने हुए विकल्पों में से किसी एक विकल्प के सम्बन्ध में निर्णय करना ही निर्णयन है'। मैक्फारलैण्ड ने निर्णयन के बारे में कहा कि निर्णय लेना चयन की वह क्रिया है जिसके अन्तर्गत अधिशासी दी हुई परिस्थिति में इस निर्णय पर पहुँचता है कि क्या किया जाना चाहिए। ग्रिफिथ्स ने निर्णय में 6 सोपानों का उल्लेख किया है– (1) समस्या का पुर्नगठन, (2) समस्या का विश्लेषण और मूल्यांकन, (3) समस्या समाधान के मानदण्ड निश्चित करना, (4) समस्या सम्बन्धी प्रदत्तों का

संकलन, (5) समाधान के लिए विकल्पों का निर्माण, उपयुक्त विकल्प तथा प्रयोग से पूर्ण विकल्प का परीक्षण एवं (6) चयनित विकल्प का समस्या समाधान के लिए प्रयोग।

पीटर ड्रकर (1970) के अनुसार निर्णय के 5 चरण हैं–

(1) समस्या को परिभषित करना, (2) समस्या का विश्लेषण करना, (3) वैकल्पिक साधनों का विकास करना, (4) सबसे अच्छे समाधान का चुनाव करना और (5) निर्णय को प्रभावशाली क्रिया में परिणित करना।

इसी प्रकार हैरिसन (1975) ने निर्णय प्रक्रिया के 6 चरण बताये हैं तथा प्रबन्धशास्त्री वैके ने निर्णय प्रक्रिया के 11 चरण बतायें हैं।

विभिन्न विद्वानों द्वारा बताये गये निर्णय प्रक्रिया के चरणों को अवलोकन तथा विश्लेषण के उपरान्त स्पष्ट होता है कि निर्णय प्रक्रिया के प्रमुख चरण निम्नलिखित हो सकते हैं–

1. उद्देश्यों का निर्धारण

निर्णय प्रक्रिया के इस चरण में किसी एक समस्या को व्यवस्थित ढंग से सुलझाने के लिये उसके उद्देश्यों को जानना तथा समझाना बहुत ही आवश्यक है। उद्देश्य इस तरह के हो कि व्यक्तिगत तथा संस्थागत उद्देश्यों में समन्वय किया जा सके।

2. समस्या की व्याख्या करना

इस चरण में प्रशासक अथवा प्रबन्धक को यह जानना चाहिए कि वास्तव मे समस्या क्या है। समस्याओं को सही अर्थ में समझ लेने में उनके समाधान खोजने का कार्य और भी सरल हो जाता है।

3. समस्या का विश्लेषण करना

समस्या की व्याख्या तथा परिभाषा के बाद समस्या के विश्लेषण का चरण आता है। यदि समस्या बड़ी हो तो उसे कई भागों में विभक्त कर दिया जाता है तथा उसके प्रत्येक भाग का विश्लेषण किया जाता है। इसके लिये समस्या के प्रत्येक भाग का पूर्ण एवं व्यवस्थित अन्वेषण किया जाना जरूरी होता है।

4. विकल्पों का मूल्यांकन करना

प्रत्येक समस्या के कई हल हो सकते हैं जिन्हें विकल्प कहा जाता है। इन विकल्पों का विकास निर्णयकर्ता की कल्पना, दूरदर्शिता, अनुभव तथा सूझबूझ पर निर्भर करता है।

5. सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चुनाव

विभिन्न वैकल्पिक समाधानों का विकास करने के बाद सर्वोत्तम विकल्प के चयन में निर्णय करने की दृष्टि से उनका मूल्यांकन करना जरूरी होता है। विकल्पों का मूल्यांकन अग्रलिखित बातों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। (1) उद्देश्यों की प्रगति में सहयोग, (2)

विकल्पों की लागत, (3) विकल्पों की उपयुक्तता, (4) समय तथा (5) विकल्पों के परिणाम।

6. सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चुनाव

सर्वोत्तम विकल्प का चुनाव उसकी उपयुक्तता पर निर्भर करता है। इसमें यह ध्यान देने की जरूरत है कि इससे संस्था विशेष के उद्देश्य कहाँ तक पूरे हो सकते हैं। निर्णयकर्ता इस सर्वश्रेष्ठ विकल्प के चयन में भविष्य में होने वाले परिणामों का भी ध्यान रखता है। सर्वश्रेष्ठ विकल्प के चुनाव में आर.एस. डावर द्वारा सुझाये गये निम्नलिखित प्रमाण तथा कसौटियाँ महत्वपूर्ण है–

1. ऐसा विकल्प चुना जाय जो सबसे कम प्रयास द्वारा अच्छे परिणाम दे सके।
2. सर्वश्रेष्ठ विकल्प समय तथा परिस्थिति के अनुकूल होना चाहिए।
3. निर्णयकर्ता को निर्णय लेते समय उस सर्वश्रेष्ठ विकल्प के लाभों का ध्यान देने के साथ–साथ उससे सम्बन्धित कठिनाईयों पर भी ध्यान देना चाहिए।
4. सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन उपलब्ध भौतिक तथा मानवीय साधनों की सीमा के अन्दर होता है।

7. निर्णय का क्रियान्वयन

ठीक प्रकार से निर्णय की क्रियान्वित हेतु सरल तथा उपयुक्त भाषा में निर्णय की सूचना दी जानी चाहिए। निर्णय को लागू करने के लिए

सभी सम्बन्धित व्यक्तियों का सहयोग लेना चाहिए। निर्णयकर्ता को इस प्रकार के प्रयास करने चाहिए कि चुनी हुई कार्य विधि सुचारू रूप से लागू की जा सके। निर्णय को जिन लोगों पर क्रियान्वित किया जा रहा है उनकी सहमति भी उस निर्णय के सम्बन्ध में ली जानी चाहिए।

8. प्रतिपुष्टि तथा नियंत्रण

जब किसी निर्णय को कार्यरूप प्रदान किया जाता है तो निर्णयकर्ता प्रशासक अथवा प्रबन्धक को चाहिए कि वह उस निर्णय के प्रभावों का मूल्यांकन करे तथा उसके सम्बन्ध में सभी आवश्यक सूचनाओं को एकत्रित करे इसके साथ ही प्रशासक को यह भी देखना चाहिए कि वह उन क्रियाओं पर भी नियंत्रण स्थापित करे जो कि निर्णय को कार्यरूप प्रदान करने के लिए की जा रही हैं।

निर्णय की विधि

निर्णय के सम्बन्ध में अधिक प्रभावकारी तथा नवीन विधियों की खोज की जा रही है जिससे कि संस्था के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए व्यवहारिक कदम उठाये जा सके। जान जी. हचिसन ने निर्णय की जिन तकनीकों का उल्लेख किया है वे प्रशासकों अथवा प्रबन्धकों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

1. अनुमानात्मक विधि

दैनिक निर्णयों को लेने के लिए यह विधि अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है। अनुमान विधि पूर्णतया भूतकाल के अनुभवों पर आधारित है। इस

तकनीक का उपयोग सरलतापूर्वक, कम लागत पर शीघ्र किया जा सकता है। यद्यपि कई अवसरों पर इस विधि द्वारा लिये गये निर्णय जोखिमपूर्ण होते हैं, फिर भी कई परिस्थितियों में अनुमानात्मक तरीके के आधार पर ही निर्णय लिये जाते हैं।

2. प्रबन्ध सिद्धान्त विधि

विभिन्न प्रबन्धशास्त्रीयों द्वारा प्रतिपादित विभिन्न सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर या उनको आधार मानकर निर्णय लिये जा सकते हैं। हाचिसन के अनुसार प्रबन्धकीय सिद्धान्त की कोई विधि नहीं है। ये तो कुशल प्रबन्धक के कार्यों के दर्शक मात्र हैं। उनके अनुसार यद्यपि प्रबन्ध के सिद्धान्त निर्णय विधि के रूप में कोई विशेष महत्व नहीं रखते हैं, लेकिन फिर भी ये निर्णय के वातावरण के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

3. मॉडल निर्माण विधि

निर्णय की मॉडल तकनीक एक ऐसा स्वरूप प्रदान करती है जिसमें निर्णयों का मूलयांकन सरलतापूर्वक किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत उत्पादित की जाने वाली वस्तु का मॉडल तैयार किया जाता है और फिर यह ज्ञात किया जाता है कि यह वस्तु ग्राहक की आवश्यकताओं के अनुरूप है या नहीं, यह वस्तु ग्राहक को पसन्द आयेगी या नहीं, यह वस्तु तकनीकी दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है या नहीं। कई तरह के मॉडल का निर्माण करके विभिन्न सम्भावनाओं का पता लगाया जाता है।

4. व्यवहारात्मक विधि

इस विधि की कुछ तकनीके हैं जिससे कि निर्णयों को सीधे रूप से प्रभावित करने वाले तत्वों का मूल्यांकन किया जाता है। सामूहिक निर्णय इसी विधि की देन है। कर्मचारियों के चयन के समय की जाने वाली मनोवैज्ञानिक जांच इसी तकनीक द्वारा विकसित एक विधि है।

5. ह्यूरिस्टिक विधि

यह विधि व्यवहारिक मान्यताओं का मिला जुला रूप है। विलियन जे जोर के अनुसार यह विवेकपूर्ण निर्णय का दूसरा तरीका है जो कि युद्धस्तर पर चाहे गये किन्तु बन्द हुए रास्ते पर पहुँचने की स्वीकृत देता है। इस पद्धति के कारण विवेकपूर्ण पथ से भी कम निर्णयकर्ता को विचार करने की स्वीकृति प्रदान की जाती है। इस धारणा का आधार बिन्दु यह है कि इसमें व्यक्तिगत मूल्यों तथा तत्वों को मूलभूत माना जाता है।

6. आर्थिक एवं वित्तीय तकनीकें

सामान्य आर्थिक सिद्धान्तों तथा सीमान्त विश्लेषण ने यह सिद्ध कर दिया है कि वे निर्णयन तकनीकों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वित्तीय तकनीकें निर्णय में विनियोजित पूँजी लाभों की वसूली के सम्बन्ध में प्रबन्ध को निर्णय आधार प्रदान करती हैं। ये तकनीके अपने आपको विश्लेषण तथा मूल्यांकन की विधि के रूप प्रस्तुत करती है तथा ये विभिन्न विकल्पों में से सही विकल्प के चुनाव में सहयोग प्रदान करती हैं।

निर्णयों के प्रकार

निर्णय विविध प्रकार के होते हैं–

1. नीति सम्बन्धी निर्णय

किसी व्यवसाय अथवा उपक्रम की स्थापना के साथ ही नीति सम्बन्ध निर्णय प्रारम्भ हो जाते हैं। प्रारम्भ में प्रवर्तक के मस्तिष्क में किसी व्यवसाय के कार्य प्रारम्भ करने के सम्बन्ध में विचार आते हैं प्रवर्तकगण व्यवसाय के स्वरूप, कम्पनी के संचालन मण्डल, सदस्यता तथा मुख्य अधिकारियों, पूँजी की मात्रा का प्रारूप, उत्पादन की मात्रा, कर्मचारी नीति आदि के विषय में महत्वपूर्ण निर्णय लेते हैं, इन निर्णयों को नीति सम्बन्धी निर्णय कहते हैं।

2. प्रशासनिक निर्णय

नीति सम्बन्धी कार्यरूप देने के लिए प्रशासनिक निर्णय लिये जाते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि किसी उपक्रम की नीति यह निर्धारित करती है कि उपक्रम किस किस्म के उत्पादन के लिये कौन से कदम उठाये जायें, इसके सम्बन्ध में प्रशासनिक निर्णय लेने पड़ते हैं।

3. प्रबन्धात्मक निर्णय

प्रशासनिक निर्णयों को वास्तविक रूप देने अथवा सम्पादन करने के लिये प्रबन्धात्मक निर्णय लेने पड़ते हैं। इसके अन्तर्गत प्रबन्ध अधिकारी

विभिन्न विभागों के अधीन आने वाले विधि मामलों के लिये दिन प्रतिदिन निर्णय लेते हैं।

निर्णयों के विषय को ध्यान में रखकर उनको निम्नलिखित तरह से वर्गीकृत किया जाता है।

1. संस्थागत निर्णय।
2. कार्य प्रणाली से सम्बन्धित निर्णय।
3. प्रशासकों के व्यवहार सम्बन्धी निर्णय।

निर्णय शैली

लिफान तथा हो (1974) ने व्यक्तियों के बीच सम्बन्धों के आधार पर एवं उनके व्यवहारों के आधार पर निर्णय शैली को तीन भागों में विभाजित किया।

1. नियमित निर्णय

संस्था को केवल चलाने के उद्देश्य से लिये जाते हैं। नियमित निर्णय शैली में परिस्थितियों का संगठन, शासक (प्रधान पुरोहित) होता है। निर्णय लेने की प्रक्रिया अधिकांशतः औपचारिक होती है और सम्बन्धों के कुछ हद तक तनावपूर्ण होने की सम्भावना रहती है। संक्षेप में यह अभिक्रमित निर्णय प्रक्रिया है।

2. समझौतावादी निर्णय

एक क्षमतावान प्रधानाचार्य के अन्तर्गत कार्य करने वाले लोगों के विचारों में कभी–कभी टकराव होता है। प्रधानाचार्य किसी भी पक्ष को चोट पहुँचाये बिना एक समझौते पर पहुँचने की क्षमता होनी चाहिए। प्रधानाचार्य

को मानवीय सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होना चाहिए और देखना चाहिए कि स्टाफ के सदस्यों के बीच कभी होने वाली ईर्ष्या व द्वेष की दुर्भावना का पर्याप्त रूप से विश्लेषण निदान व उपचार हो। संक्षेप में यह समझौतावादी निर्णय है।

3. अन्वेषणात्मक निर्णय

पद प्रधान ढाँचे पर कम ध्यान दिया जाता है और इसकी विशेषता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचारों को विकसित करने और प्रकट करने की स्वतन्त्रता होती है।

निर्णय शैली को प्रभावित करने वाले कारक

निर्णयकर्ता के निर्णय की श्रेष्ठता अथवा निम्नता कई कारकों से प्रभावित होती है। इनमें से प्रमुख कारक निम्नलिखित हैं–

1- **निर्णयकर्ता का व्यक्तित्व**– निर्णय शैली को निर्णयकर्ता का व्यक्तित्व प्रभावित करता है।

2- **विकल्प**– विकल्पों की उपयोगिता से निर्णय निश्चित रूप से प्रभावित होता है।

3- **उद्देश्य**– निर्णयकर्ता को संस्था के उद्देश्यों की पूर्ण जानकारी आवश्यक है अन्यथा उसके निर्णय सही नहीं होंगे।

4- **वातावरण**– संस्था अथवा संगठन के आन्तरिक तथा वाह्य दोनों ही वातावरण निर्णयकर्ता के निर्णय को प्रभावित करते हैं।

5- **समय**– निर्णय करने के लिए निणर्यकर्ता को मिलने वाला समय एक ऐसा तत्व है जो उसके निर्णय को प्रभावित करता है।

6- **सहयोग एवं सहभागिता**– सहयोग एवं सहभागिता भी निर्णय शैली को प्रभावित करती है।

निर्णयकर्ता के लिए उपर्युक्त तत्वों अथवा घटकों की सम्यक जानकारी आवश्यक है। हमारी शिक्षा संस्थाओं के अधिकांश प्रधानाचार्यों तथा प्रबन्धकों को इन घटकों के प्रति अनभिज्ञता है। इसी कारण उनके कई निर्णय उपयुक्त नहीं हो पाते। फलतः संस्था के लोगों में असंतोष हो जाता है और इससे संस्था की प्रगति रूकती है।

अच्छे निर्णय के आधार

एक निर्णयकर्ता के लिए निर्णय को प्रभावित करने वाले कारकों की सम्यक जानकारी के साथ ही साथ निर्णय के आधारों की भी जानकारी आवश्यक है। तभी वह निर्णय के क्षेत्र में सफल हो सकेगा। निर्णयकर्ता के लिए जिन आधारों का ज्ञान और उनका अनुसरण आवश्यक है वे निम्नवत् है–

(1) आर्थिक
(2) वैधानिक
(3) सामाजिक
(4) नैतिक
(5) अधिकार एवं स्वीकृति
(6) उद्देश्यात्मक
(7) उचित समय
(8) पूर्णता
(9) स्वीकार्य होने का गुण
(10) व्यवहारिक उपयोग

1.4 समस्या कथन

किसी भी समस्या पर कार्य करने के लिए समस्या को शीर्षक के रूप में संयोजित करना आवश्यक होता है। प्रस्तुत समस्या को छात्र ने निम्नलिखित शीर्षक से निबद्ध किया है–

''माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के निर्णय शैली का अध्ययन''

1.5 अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

शिक्षा प्रशासन के अनेक कार्य हैं जिनमें नियोजन, नीति–निर्धारण, निर्णयन, संगठन, नियंत्रण, संप्रेषण, निर्देशन, अभिप्रेरणन, समन्वय तथा मूल्यांकन महत्वपूर्ण हैं। इन कार्यो में निर्णय सबसे अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि निर्णय के बिना इन कार्यों को सुचारू रूप से सम्पन्न नहीं किया जा सकता।

निर्णय सहित प्रशासन के सभी कार्यों के लिए संस्था का प्रधान अर्थात प्रधानाध्यापक अथवा प्रधानाचार्य विशेष रूप से जिम्मेदार है। यद्यपि वह विभिन्न कार्यों के करने में विद्यालय अथवा संस्था के अन्य सदस्यों अथवा वर्गों जैसे शिक्षकों तथा विद्यार्थियों या कर्मचारियों का सहयोग ले सकता है और आवश्यकतानुसार उनसे सलाह–मशविरा कर सकता है किन्तु अन्तिम निर्णय के लिए वहीं जिम्मेदार होता है। वस्तुतः विद्यालय के प्रबन्ध तथा आन्तरिक प्रशासन में उसकी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। विद्यालय का प्रशासनिक स्वरूप, समाज के मध्य विद्यालय का स्थान,

शिक्षकगण, कर्मचारी वर्ग, विद्यार्थी, कार्यालय भवन, छात्रावास, कक्षा–कक्ष, साज–सज्जा एवं सामग्री, वाचनालय आदि की व्यवस्था सम्बन्ध कार्यों के साथ ही साथ पाठ्यक्रियाएं अर्थात अध्यापन सम्बन्धी कार्य, पाठसहगामी क्रियाएं, समय विभाजन चक्र का निर्माण, परीक्षाओं का संचालन, छात्रों के मध्य स्वशासन और अनुशासन, खेल तथा व्यायाम का संगठन, विद्यालय में स्वास्थ तथा सफाई की व्यवस्था आदि ऐसे अनेक विषय है जिनके लिए समय–समय पर ठोस तथा प्रभावशाली निर्णयों की आवश्यकता होती है। इन्हीं निर्णयों पर विद्यालय की प्रगति, प्रतिष्ठा तथा शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की निष्पत्ति तथा प्रधानाध्यापक की सफलता निर्भर है। प्रायः देखने को मिलता है कि विद्यालय के प्रधानाध्यापक वरिष्ठता के आधार पर इस पद पर आसीन कर दिये जाते हैं। यद्यपि वे अपने विषय में योग्य तथा पर्याप्त शिक्षण अनुभव वाले होते हैं, किन्तु प्रशासन के क्षेत्र में अधिकांश प्रधानाध्यापक का ज्ञान अल्प होता है। विद्यालय संगठन तथा प्रशासन ऐसा विषय है जिसके लिए विशेषज्ञता अत्यन्त आवश्यक है, अन्यथा उनके द्वारा शिक्षा प्रशासन के विविध कार्यो का संचालन कठिन होगा। शिक्षा प्रशासन के कार्यों में निर्णय ऐसा कार्य है जिसका गहन ज्ञान अपरिहार्य है। इसके बिना प्रधानाध्यापक बिल्कुल आगे नहीं बढ सकता है।

इस देश में विभिन्न प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों का संचालन किया जाता है। कुछ केन्द्र सरकार द्वारा चलाये जाते हैं, कुछ राज्य सरकार द्वारा। इसी प्रकार कुछ विद्यालय अनुदानित होते हैं और कुछ गैर अनुदानित होते हैं। केन्द्रीय विद्यालयों तथा नवोदय विद्यालय के

प्रधानाध्यापकों को गहन प्रशासनिक प्रशिक्षण दिया जाता है। अन्य प्रकार के विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों को ऐसी व्यवस्था देखने नहीं मिलती है। अतः स्वाभाविक है कि विभिन्न प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाध्यापकों की निर्णय विधि तथा अपनायी जाने वाली निर्णय शैली में अन्तर होगा।

निर्णय शैली में इसी अन्तर के कारण विद्यालयों के कार्यों में शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की कार्य निष्पत्ति में अन्तर देखने को मिलता है। कुछ प्रधानाध्यापक अपने कार्यों निर्णयों से प्रतिष्ठा अर्जित करते हैं। तो वहीं दूसरी तरह कुछ प्रधानाचार्यो को बदनामी मिलती हैं तथा उनकी संस्था के शिक्षक, शिक्षार्थी तथा कर्मचारी असन्तुष्ट रहते हैं। निर्णय के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य की अत्यन्त कमी है जबकि यह शिक्षा प्रशासन का महत्वपूर्ण कार्य है। अनुसंधान की इसी रिक्तता की पूर्ति के लिए प्रस्तुत अध्ययन किया गया।

इस अध्ययन के परिणामों से विभिन्न प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यो द्वारा अनुसरित निर्णय शैली का ज्ञान हो सकेगा जिससे प्रधानाचार्य तो लाभान्वित होंगे ही उनसे शिक्षकगण भी लाभान्वित होंगे।

इस अध्ययन से अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान तथा शिक्षा निदेशालय सहित वे संगठन लाभ उठा सकेंगे जो प्रशासकों के शिक्षण तथा प्रशिक्षण का कार्य करते हैं तथा विद्यालयों में नियुक्ति हेतु उनका चयन करते हैं।

1.6 अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य थे

1. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों प्रधानाचार्यों के नियमित निर्णय शैली का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के समझौतावादी निर्णय शैली का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के अन्वेषणात्मक निर्णय शैली का तुलनात्मक अध्ययन करना।

1.7 अध्ययन की परिकल्पनाएं

प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित था–

1. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के नियमित निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।
2. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के समझौतावादी निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

3. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के अन्वेषणात्मक निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

1.8 अध्ययन में प्रयुक्त विशिष्ट शब्द का परिभाषीकरण

निर्णय :

"निर्णय का शाब्दिक अर्थ है, पूर्ण निश्चय करना। पीटर ड्रकर के विचार से यह विभिन्न विकल्पों के बीच चुनाव है। स्पष्टतया निर्णय किसी विशेष कार्य को करने का निर्धारण करता है यह लक्ष्य तक पहुँचने का साधन है। बेक्टर के शब्द कोष के अनुसार निर्णय लेने से आशय अपने मस्तिष्क में सम्मति या कार्यवाही के तरीके के निर्धारण से है।"

1.9 अध्ययन की परिसीमाएं

किसी भी समस्या का अध्ययन प्रारम्भ करने से पूर्व अध्ययन की सीमाओं का निर्धारण कर लेना अध्ययन की प्रक्रिया को सुलभ एवं आसान बना देता है। वास्तव में प्रत्येक समस्या अपने आप में वृहद होती है। वह अपने क्षेत्र में केवल एक समस्या को न लेकर अपितु कई अन्य समस्याओं को भी समेटे होती है। इसी कारण प्रत्येक अनुसंधानकर्ता को अध्ययन की परिसीमाएं निर्धारित करनी पड़ती है। जिसको दृष्टिगत रखते हुए कार्य करता है। किसी अनुसंधानकर्ता के लिए यह बहुत हद तक असम्भव नहीं तो दुरूह अवश्य है कि वह किसी समस्या के वृहत्तर रूपों का एक साथ

अध्ययन कर सके। समयाभाव, धनाभाव, सूचनाभाव अनेक ऐसे कारण होते हैं जिससे कि शोधकर्त्ता को अध्ययन को कुछ सीमाओं में बाधना पड़ता है। उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए शोधकर्त्ता ने अपनी समस्या को निम्नलिखित रूपों में सीमाकित किया है–

1. प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जनपद के माध्यमिक विद्यालयों तक सीमित था।

2. प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के माध्यमिक स्तर के अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों तक सीमित था।

3. प्रस्तुत अध्ययन को शोध की सर्वेक्षण विधि द्वारा पूर्ण किया गया है अतः अध्ययन शोध की सर्वेक्षण विधि तक ही सीमित था।

अध्याय-द्वितीय

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण

2.1 प्रस्तावना

सम्बन्धित साहित्य शोधकर्त्ता को मार्गदर्शन प्रदान करता है। जब तक अपने क्षेत्र से सम्बन्धित सर्वेक्षणों एवं अनुसंधानों में किये गये कार्यों एवं उनकी विधियों एवं निष्कर्षों के सम्बन्ध में जानकारी नहीं होगी तब तक अनुसंधानकर्ता अपने मार्ग पर आगे नहीं बढ़ सकता है।

यह अनुसंधान के लिए सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि तैयार करता है तथा विभिन्न सिद्धान्तों एवं निहित धारणाओं को समझाने में सहायता प्रदान करता है। अनुसंधान की सफलता तथा उसकी उपयोगिता के सम्बन्ध में पूर्वानुमान देता है। समस्या के परिभाषीकरण, सीमांकन व परिकल्पना निर्माण में सहायता प्रदान करता है। निष्कर्षों के विश्लेषण के सूझ पैदा करता है तथा समर्थन के लिए आधार प्रस्तुत कर अनुसंधानकर्ता के आत्मविश्वास को विकसित करता है।

यदि गहनतापूर्वक विचार करें तो यह स्पष्ट होता है कि सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण शोध प्रबन्ध का एक अध्याय जोडने तथा ग्रन्थ सूची तैयार करने के लिये ही आवश्यक नहीं है बल्कि अनुसंधान के सभी स्तरों पर यह सहायक होता है। यथा समस्या का चुनाव, समस्या का परिभाषीकरण तथा विश्लेषण एवं कथन, परिकल्पनाओं का निर्माण, अध्ययन की सीमा के निर्धारण, अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने, न्यादर्श के चुनाव, ऑकडों का संग्रह, ऑकडों के सारणीयन, व्यवस्थापन तथा विश्लेषण, सांख्यिकी विधियों के प्रयोग तथा निष्कर्ष निकालने में सहायता करता है।

2.2 भारत में सम्पन्न हुए अध्ययन

निर्णय प्रक्रिया के सम्बन्ध में पूर्ण वर्षों में किये कार्यों का विवरण एवं समीक्षा निम्नवत् प्रस्तुत है–

वर्मा (1974) ने राजस्थान के एकहरी तथा दोहरी पाली वाले माध्यमिक विद्यालयों की प्रशासनिक समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन किया।

उन्होंने अध्ययन में पाया कि दोहरी पाली वाले विद्यालयों की अपेक्षा एकहरी पाली वाले विद्यालयों में सम्प्रेषण अधिक प्रभावकारी था, परिणामस्वरूप स्टाफ के आपसी सम्बन्ध अच्छे थे। यह भी पाया कि एकहरी पाली वाली विद्यालयों की तुलना में निर्णय प्रक्रिया अधिक तीव्र या प्रभावकारी थी चाहें निर्णय वैयक्तिक स्तर पर लिये जाते थे या समूह के स्तर पर, चाहें वे दिन–प्रतिदिन के मामले से सम्बन्धित थे या नीति से सम्बन्धित।

कान्त (1978) ने 'फैक्टर्स इनफ्यूएसिंग डीसिजन मेकिंग परटेनिंग टू इण्डस्ट्रियल फंक्सनिंग ऑफ प्राइवेट एण्ड पब्लिक स्कूल' का अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि दोनों प्रकार के विद्यालयों की निर्णय प्रक्रिया में भिन्नता थी तथा पब्लिक विद्यालय अपेक्षाकृत औद्योगिक पद्धति पर कार्य कर रहे थे।

त्यागी (1977) ने मूल्यों के सम्बन्ध मे विद्यार्थियों की निर्णय प्रक्रिया मे सहभागिता के प्रति प्रधानाचार्यों शिक्षको तथा विद्यार्थियों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि विद्यार्थियों से सम्बन्धित मामलों में उनकी भागीदारी के प्रति तीनों वर्गों के लोगों की अभिवृत्ति में विशेष अन्तर नहीं था। सभी के विचार में विद्यार्थियों को उनसे सम्बन्धित मामलों के निर्णयों में भागीदारी दी जानी चाहिए।

मोहन्ती (1980) ने उडीसा के संदर्भ में प्राथमिक शिक्षा पर जनतन्त्र के प्रभाव का अध्ययन किया और उन्होंने पाया कि प्रधानाध्यापकों और वरिष्ठ शिक्षकों को जनतंत्र का अर्थ ही ज्ञात नहीं था। विद्यार्थियों की काउन्सिल या यूनियन नहीं थी। स्टाफ बैठकें नियमित रूप से नहीं होती थी। स्पष्टतः विद्यालय में निर्णय लेने की जनतांत्रिक प्रक्रिया नहीं थी। सभी निर्णय ऊपर से थोपे जाते थे।

गणपति (1980) विद्यालयों में परिवर्तन तथा नवाचारों के क्षेत्र में निर्णय प्रक्रिया का अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि वैयक्तिक तथा सामूहिक दोनों स्तरों पर निर्णय लिये गये। सामूहिक निर्णय प्रक्रिया किसी नवाचार के निश्चय के बाद क्रियान्वित के चरणों एवं दायित्व विभाजन के लिये अपनायी गई। नवाचार अपनाने वाले विद्यालय में प्रारम्भ के निश्चय के सम्बन्ध में प्रधानाध्यापकों का निर्णय प्रकार अधिकारिक ही देखने में आया।

शर्मा (1982) ने निर्णय प्रक्रिया के शिक्षा प्रणाली पर प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि –

(1) शिक्षक भी निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता की अपेक्षा करते थे।

(2) संगठन स्वास्थ्य का निर्णय में शिक्षकों की भागीदारी के साथ सार्थक सम्बन्ध था।

वर्मा (1987) ने निर्णय प्रक्रिया पर व्यक्तित्व तथा संस्थागत कारकों के प्रभावों का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि निर्णय प्रक्रिया पर व्यक्तित्व तथा संस्थागत कारकों का प्रभाव पड़ा।

कृष्णराज (1987) ने स्वायत्तशासी तथा सम्बद्ध महाविद्यालयों में सगठन संरचना, नेतृत्व तथा निर्णय प्रक्रिया का अध्ययन किया। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य संगठन संरचना, नेतृत्व तथा निर्णय प्रक्रिया का स्वायत्तशासी तथा सम्बद्ध महाविद्यालयों में तुलना करना था।

संगठन संरचना अध्ययन में S.D.Q. उपकरण का प्रयोग किया गया जिसे शोधकर्त्ता द्वारा बनाया गया था जिसमें छः बीमाएं थी। और नेतृत्व के व्यवहार का अध्ययन के लिए LBPQ का प्रयोग किया गया था। जो विभागाध्यक्ष के नेतृत्व को मापा। निर्णय प्रक्रिया के मापन के लिए D.M.D.S. स्केल का प्रयोग किया था।

उनके अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष इस प्रकार हैं–

1. सम्बन्धित कालेजों की अपेक्षा स्वायत्तशासी कालेजों में विशिष्टीकरण अधिक पाया गया।

2. स्वायत्तशासी महाविद्यालयों में केन्द्रीकरण का स्तर कम था।
3. सम्बद्ध कालेजों के विभागों की स्वायत्तता, स्वायत्तशासी कालेजों की अपेक्षा अधिक थी।
4. दोनों प्रकार के कालेजों के प्रधानाध्यापकों के निर्णय प्रक्रिया की चारों बीमाओं में अन्तर था।

सिंह (1988) द्वारा एक अध्ययन में स्पष्ट किया गया कि निर्णय प्रक्रिया की प्रभावकारिता निर्णय लेने वाले की निर्णय शैली, नेतृत्व, जोखिम लेने, साहस, न्याय, दृढ़तापूर्वक अपनी बात कहने तथा दृढ़निश्चय जैसे गुणों पर निर्भर करती है।

बाजपेयी (1993) ने विद्यालय की निर्णय प्रक्रिया के आलोचनात्मक अध्ययन में पाया कि सभी अध्यापकों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल नहीं किया जाता था। विद्यालय की निर्णय प्रक्रिया प्रधानाचार्य के विचारानुसार चलती थी। अधिकांश शिक्षक विद्यालय की निर्णय प्रक्रिया से संतुष्ट नहीं थे। सभी अध्यापक चाहते थे उन्हें और अधिक भागीदारी प्राप्त हो।

वर्मा (1994) द्वारा एक अध्ययन में बताया कि राजस्थान के माध्यमिक विद्यालयों में 80 प्रतिशत निर्णय व्यक्तिगत स्तर पर स्वविवेक से लिए गये जबकि 20 प्रतिशत निर्णय स्टाफ के सहयोग से लिये गये।

शर्मा (1997) ने अपने एक अध्ययन में पाया कि माध्यमिक विद्यालयों की निर्णय प्रक्रिया में विद्यार्थियों की सहभागिता अपेक्षाकृत कम थी। संस्थागत योजना में तो उनकी सहभागिता नगण्य थी।

शर्मा (1998) द्वारा एक अध्ययन में देखा गया कि विद्यालय से सम्बन्धित प्रकरणों के निर्णयों में शिक्षकों की सहभागिता भिन्न–भिन्न प्रशासनिक नियंत्रण वाले माध्यमिक विद्यालयों में भिन्न–भिन्न अंशों में थी। अधिकांश विद्यालयों में निर्णय नियंत्रित होते थे। उन्होंने सुझाव दिया कि जहां तक सम्भव हो निर्णय सर्वसम्मत होने चाहिए।

2.3 विदेशों में सम्पन्न हुए अध्ययन

ग्रिफिथ (1959) के अनुसार निर्णय प्रकृति से पूर्णतया व्यवहारिक व अनुभवजन्य होते हैं क्योंकि उनकी सफलता के कार्य की कुशलता सम्पादन से जुड़ी होती है। प्रायः संगठन के सभी कार्यों का सम्बन्ध संगठन के लक्ष्यों से जुड़ा रहता है। अतः सभी कार्य निर्णय की सीमा से जुड़ा रहता है।

ओडिवर्न (1960) ने उद्देश्यों द्वारा प्रबन्धकीय निर्णयों का अध्ययन किया और कहा कि जब निर्णय विचार–विमर्श की स्थिति में हो तब प्रशासक को सबसे उपयुक्त व्यवहार का सावधनीपूर्वक चयन करना चाहिए। उनके अनुसार यदि प्रशासक निर्णय लेने वाली समिति को प्रभावित करने तथा निर्णय को नियंत्रित करने का प्रयास करता है तो वह खुली आलोचना का पात्र होता है। यदि कोई प्रशासक निष्क्रिय रहता है तो उस पर नेतृत्व के अभाव का आरोप लगता है। यदि लिया जाने वाला निर्णय उपयुक्त न हो तो प्रशासक को हस्तक्षेप करना चाहिए। एक प्रभावशाली प्रशासक निर्णयों में पर्याप्त नियंत्रण का प्रयास करता है जिससे

लिया जाने वाला निर्णय और उसके कारण संस्था में होने वाले परिवर्तन संस्था के हित में हो ताकि संस्था अपने उद्देश्यों में सफल हो सके।

ब्रिजेज (1967) ने निर्णयों में शिक्षकों को सम्मिलित किये जाने का अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि अधिकतर मामलों में शिक्षकों को सम्मिलित नही किया जाता है। उन्होंने सुझाव दिया कि जब शिक्षकों का वैयक्तिक हित जुड़ा हो तब भी निर्णयों में उनकी सहभागिता होना आवश्यक है। शिक्षण विधियाँ, अनुशासन, पाठ्यचर्या, अनुदेशन संगठन आदि क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ शिक्षकों को इस सम्बन्ध में किसी प्रकार के निर्णयों में सम्मिलित किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त जहाँ किसी क्षेत्र विशेष में निर्णय लिया जाता है और उस सम्बन्ध में वे विशेषज्ञ है तब उनको निर्णय में सम्मिलित किया जाना आवश्यक है।

ग्लैथोर्न (1968) ने एक अध्ययन में पाया कि अधिकांश कन्वेंशनल विद्यालयों में प्रयुक्त निर्णय प्रक्रिया निश्चित रूप से न्यायपूर्ण नहीं थी। लोगों के साथ चालाकी से व्यवहार किया जाता था। प्रधानाचार्य विद्यार्थी परिषद से कहता था कि उसके पास ताकत है जबकि वह निश्चित रूप से शक्तिहीन है। अधिकांश महत्वपूर्ण निर्णय परदे के पीछे तथा स्टाफ की मीटिंग में लिए जाते थे। जहाँ प्रभावित तथा सम्बन्धित लोगों को न तो सम्मिलित किया जाता था और न ही निर्णय प्रक्रिया के ज्ञान से ही उन्हें अवगत होने दिया जाता था।

ओकोन्नर (1969) ने अपने एक अध्ययन में अनुभव किया कि एक प्रभावी प्रधानाचार्य को निर्णय लेने के पूर्व स्टाफ के अभिमतों का गहन अध्ययन करना चाहिए।

ओवेन्स तथा मेकाल (1970) ने अपने-अपने अध्ययनों में स्पष्ट किया है कि निर्णय प्रक्रिया प्रशासनिक प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु है।

मिलेट (1974) ने निर्णय प्रक्रिया में प्रधानाचार्यों, संकायाध्यक्षों तथा संस्था अध्यक्षों की भूमिका का अध्ययन किया।

उन्होंने पाया कि सम्पूर्ण निर्णय प्रक्रिया में प्रधानाचार्यों अथवा संकायाध्यक्षों की भूमिका, जो कुछ प्राप्त हो चुका है और जो प्राप्त होने की प्रक्रिया में, के लिए सम्प्रेषण सलाह तथा निरन्तर अनुसरण की अपेक्षा की जाती है। निर्णय में प्रशासक की भूमिका को शक्ति तब प्राप्त होती है जबकि कालेज प्रदत्त आर्थिक स्रोतों के लिए उत्तरदायी है।

रोवन (1979) ने एक अध्ययन में बताया कि 80 प्रतिशत से अधिक उच्च स्तर के प्रबन्धक जिन्होंने अपनी कम्पनी के लोगों को पाँच वर्षों के समय के अन्दर ही दो गुना कर दिया था औसत से अधिक अन्तर्ज्ञानात्मक कौशल रखते थे।

आरचर (1980) ने एक अध्ययन में 200 से अधिक प्रबन्धकों, पर्यवेक्षकों तथा अधिशासियों की निर्णय प्रक्रिया तथा प्रतिरूपों का अध्ययन किया। अपने अध्ययन में विश्लेषण तथा प्रमापीकरण प्रक्रिया में आरचर ने

तर्क दिया है कि सबसे सफल प्रबन्धन व पद क्रम के अनुसार प्रबन्ध निर्णय लेते हैं।

लियांस (1987) ने 'ए स्टडी ऑफ पब्लिक स्कूल प्रिन्सिपल्स : डीसीजन मेकिंग एथारिटी एण्ड ऑटानामी' का अध्ययन किया। उनके अध्ययन का उद्देश्य नार्थ कैरोलिना के पब्लिक स्कूल में लिये जाने वाले सामान्य निर्णय स्तर को जानना था और प्रधानाचार्य के स्वायत्तता के अधिकारों की मात्रा को जानना था। उन्होंने एक प्रश्नावली को मेल द्वारा यादृच्छिक विधि द्वारा 128 प्रधानाचार्यों को भेजा।

टेवेल (1988) 'द वेस्ट चाइल्ड आई इयर हैड : टीचर इनफ्लूएन्स ऑन द डीसीजन मेकिंग ऑफ थ्री अर्बन हाई स्कूल प्रिन्सिपल्स' का अध्ययन किया। उन्होंने अध्ययन में 3 अर्बन का चयन किया। अपने अध्ययन में उन्होंने पाया कि–

1. विषय प्रभावी प्रधानाचार्य की अभिवृत्ति निर्णय प्रक्रिया में शिक्षक सहभागिता के ओर थी।
2. निर्णय प्रक्रिया पर शिक्षक का प्रभाव पड़ता है।
3. संकायों के सम्बन्ध में प्रधानाचार्यों में विरोधाभास था।

लोगन (1992) ने 'स्कूल बेस्ड डीसीजन मेकिंग : फर्स्ट ईयर परसेप्सन्स ऑफ केन्चुकी टीचर प्रिन्सिपल्स एण्ड काउन्सलर' का अध्ययन किया।

उन्होंने अपने अध्ययन में 1991–92 में SBDM प्रक्रिया में केन्चुकी के 69 सेकेण्ड्री स्कूलों को शामिल किया। सर्वे मेल विधि द्वारा कुल 558 प्रधानाचार्यों से प्रदत्तों को इकट्ठा किया।

उन्होंने पाया कि स्कूल आधारित निर्णय प्रक्रिया विद्यालय के पाठ्यचर्या को प्रभावित करता है तथा मुख्यतः व्यवसायिक शिक्षा में और भी प्रभावित करती है।

ब्राउन (1996) ने 'प्रिन्सिपल्स परसेप्सन्स ऑफ कम्यूनिटी एण्ड इनवाल्वमेन्ट इन शेयर्ड डीसीजन मेकिंग' का अध्ययन किया। उन्होंने अध्ययन में 217 प्रधानाचार्यो का सर्वेक्षण किया और पाया कि प्रधानाचार्यों ने अपने उत्तर में प्रकट किया कि उनके स्टाफ निर्णय प्रक्रिया में परिमित से ऊपर निर्णय प्रक्रिया में सहभागी होते हैं, इसके परीक्षण के लिए पूरे समूह को सूचना देने के बाद भी वे निर्णय प्रक्रिया में सक्रिय रूप से शामिल नहीं हुए। उन्होंने पाया कि लिंग और विद्यालय स्तर सहभागिता के वांछनीय स्तर को प्रभावित नहीं करता हैं।

लिविंगस्टान (1999) ने 'शेयर्ड डीसीजन मेकिंग : विलीवस एण्ड प्रैक्टिसेस ऑफ रूरल स्कूल प्रिन्सिपल्स' का अध्ययन किया। अपने अध्ययन में उन्होंने 50 प्रधानाचार्यों के साथ साक्षात्कार किया जो जार्जिया के ग्रामीण क्षेत्र के प्राथमिक, उच्च प्राथमिक तथा हाईस्कूल के थे। उन्होंने पाया कि साथ–साथ काम करने वाले अध्यापकों को निर्णय प्रक्रिया में अवसर दिया जाता था। प्रिन्सिपल्स ने माना कि छात्रों की आवश्यकताओं को परिभाषित करने में अध्यापक बहुत महत्वपूर्ण होते हैं।

निर्णय के क्षेत्र में किए गये अध्ययनों का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि अधिकांश अनुसंधानकर्ताओं ने निर्णय प्रक्रिया की अवधारणा पर अपना ध्यान केन्द्रित किया था। विदेशी अनुसंधानकर्ताओं ने अपने अनुभवों के आधार पर निर्णय प्रक्रिया सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों का विश्लेषण किया है तथा निष्कर्ष निकाला है। यद्यपि कुछ विदेशी तथा कुछ भारतीय अनुसंधानकर्ताओं ने शोध उपकरणों का प्रयोग कर आँकडे एकत्र किये है तथा उन्हें को अपने अध्ययनों के परिणामो तथा निष्कर्षो का आधार बनाया है, किन्तु इनमें से अधिकांश अध्ययन निर्णय में प्रशासक की भूमिका, उसका व्यवहार तथा शिक्षकों अथवा अधीनस्थों की सहभागिता को प्रमुख चर के रूप में लिए है।

प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्त्ता ने माध्यमिक स्तर के प्रधानाचार्यों की निर्णय शैली को प्रमुख चर के रूप में लिया है। अध्ययन से यह जानने का प्रयास किया गया कि प्रधानाचार्यों द्वारा कौन सी निर्णय शैली का प्रयोग किया जाता था।

अध्याय-तृतीय

अध्ययन का प्रारूप

3.1 अनुसंधान विधि

3.2 अध्ययन की जनसंख्या

3.3 न्यादर्श

3.4 अध्ययन का न्यादर्श

3.5 शोध उपकरण

3.6 उपकरण का प्रशासन एवं प्रदत्तों का संकलन

3.7 आंकड़ों के विशलेषण की प्रविधि

3.1 अनुसंधान विधि

अनुसंधान विधि उस मार्ग की ओर इंगित करती है जिस पर चलकर हम सत्य की खोज करते हैं। जिस प्रकार किसी कार्य के उद्देश्यों की प्राप्ति एवं सफलता के लिये उसके दिशा निर्देशन एवं योजना की आवश्यकता होती है उसी प्रकार शोध कार्य में भी योजना बना लेना आवश्यक होता है ताकि शोधकर्त्ता को प्ररतावित शोध प्रक्रिया द्वारा सफल परिणामों की प्राप्ति हो सके। शोध कार्य में अनुसंधान विधि की उपादेयता की उपेक्षा नहीं की जा सकती। अनुसंधान विधि का निर्धारण शोध की प्रकृति, विषय सामग्री, स्थान तथा उसके उद्देश्यों पर आधारित होता है। इसके अन्तर्गत किसी समस्या को व्यवस्थित करना, निरीक्षण, स्पष्टीकरण, वर्गीकरण व प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण भी सम्मिलित है।

जार्ज मूले ने सामान्यतः शोध विधियों को ऐतिहासिक, सर्वेक्षण तथा प्रयोगात्मक विधियों में बाँटा है। प्रत्येक शोध विधि एक निश्चित प्रकार की समस्या का हल प्रस्तुत करने के लिए उपयुक्त होती है।

प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है। सर्वे में शोधकर्त्ता ने अपने शोध के आधार पर स्वाभाविक परिस्थिति में व्यक्तियों तथा व्यक्तियों के समूहों द्वारा दिखलाई गई मनोवृत्ति तथा मत तथा उनकी धार्मिक तथा राजनैतिक सम्बद्धता का अध्ययन करता है।

अतः प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्त्ता ने माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों द्वारा लिये जाने वाले निर्णय के निर्णय शैली का अध्ययन किया है।

3.2 अध्ययन की जनसंख्या

जनसंख्या या समष्टि का तात्पर्य व्यक्तियों, वस्तुओं, निरीक्षणों या घटनाओं की निश्चित संख्या से है जिसमें एक विशिष्ट समूह के समस्त व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है तथा वे सजातीय होते हैं। अर्थात इकाईयों के समूचे समूह को जिसके लिए चर अभीष्ट है, जनसंख्या कहलाता है।

करलिंगर ने जनसंख्या को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "जनसंख्या से तात्पर्य वस्तुओं, घटनाओं एवं लोगों के किसी अच्छे ढंग से परिभाषित वर्ग के सदस्यों से होता है।"

जनसंख्या से अभिप्राय अनुसंधान के लिए निर्धारित उस समस्त क्षेत्र से है जिसमें विचाराधीन विषय वस्तुओं के सम्पूर्ण समूह के बारे में जानकारी प्राप्त करनी होती है।

प्रस्तुत अध्ययन का शीर्षक "माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की निर्णय शैली का अध्ययन" है।

अतः माध्यमिक स्तर के अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों को अध्ययन की जनसंख्या के रूप में लिया गया है।

3.3 न्यादर्श

न्यादर्श एक निश्चित संख्या में जनसंख्या से चयन किया गये सदस्यों का एक समूह होता है।

न्यादर्श में प्रतिनिधित्व का गुण होता है। दूसरे शब्दों में न्यादर्श चुने हुए व्यक्तियों या वस्तुओं की ऐसी संख्या होती है जो पूरे जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है, अर्थात वह पुनः सभी गुणों को दिखलाता हैं, जो जनसंख्या में होता है।

शोधकर्त्ता अपने शोध अध्ययन के लिए जनसंख्या से निश्चित संख्या में कुछ सदस्यों या वस्तुओं का चयन कर लेता है। यही चयनित संख्या को ही व्यवहार परख शोध में न्यादर्श कहा जाता है।

जनसंख्या का आकार बड़ा होने के कारण जनसंख्या के प्रत्येक इकाई का सर्वेक्षण या अध्ययन आसान नहीं होता है। न्यादर्श द्वारा इस समस्या का समाधान हो जाता है क्योंकि इसके द्वारा वह सम्पूर्ण जनसंख्या से प्रतिनिधि न्यादर्श का चयन कर उस किये गये अध्ययन के द्वारा सम्पूर्ण जनसंख्या के विषय में निष्कर्ष निकाल सकता है।

3.4 अध्ययन का न्यादर्श

प्रस्तुत शोध कार्य में शोधकर्त्ता ने साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन विधि का उपयोग करके अध्ययन से सम्बन्धित जनसंख्या में से न्यादर्श का चयन किया था। शोधकर्त्ता सम्बन्धित जनसंख्या से न्यादर्श का चुनाव करने हेतु सर्वप्रथम आजमगढ़ जनपद के जिला विद्यालय निरीक्षक कार्यालय द्वारा जिले के समस्त अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों तथा उनके प्रधानाचार्यों की सूची प्राप्त की।

इस सूची में 24 अनुदानित विद्यालय, 2 सरकारी तथा 35 गैर अनुदानित विद्यालय थे।

इसके बाद अनुदानित तथा सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के नाम अलग–अलग पर्ची पर लिखकर उन्हें डिब्बे में बन्द करके उसे घुमाकर आवश्यकतानुसार पर्ची उठा लिया और उन्हें न्यादर्श के रूप में सम्मिलित कर लिया।

इसी प्रकार गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के नाम अलग–अलग पर्ची पर लिखकर उन्हें डिब्बे में बन्द करके घुमाकर आवश्यकतानुसार पर्ची उठा लिया और उन्हें गैर अनुदानित प्रधानाचार्यों के न्यादर्श के रूप में सम्मिलित कर लिया।

न्यादर्श के रूप में अनुदानित एवं सरकारी विद्यालयों के 14 प्रधानाचार्यों तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के 16 प्रधानाचार्यों को लिया गया जो अपनी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते थे।

3.5 शोध उपकरण

अनुसंधान कार्य में शोधकर्त्ता को शोध समस्या से सम्बन्धित तर्कसंगत आँकड़ों की आवश्यकता होती है ताकि वह सम्बन्धित परिकल्पनाओं का परीक्षण कर सके। समस्या से सम्बन्धित आँकड़ों को संकलित करने के लिए जिन साधनों का प्रयोग किया जाता है, अनुसंधान में उपकरण कहलाता है।

अनुसंधान कार्य की प्रासंगिकता बनाये रखने के लिए शोधकर्त्ता को विश्वसनीय तथा वैध उपकरणों का प्रयोग आवश्यक है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्यों तथा आवश्यकताओं के अनुसार सूचनाओं के संग्रह हेतु डॉ. नूरजहाँ एन. गनिहार द्वारा निर्मित उपकरण का प्रयोग शोधकर्त्ता ने किया है।

DECISION MAKING STYLE SCALE (D.M.S.S.) by Dr. Noorjahan N. Ganihar (1971)

प्रस्तुत अध्ययन में माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की निर्णय शैली का अध्ययन करना था जिसके लिए D.M.S.S. उपकरण की सहायता से ऑकड़ों को इकट्ठा किया गया।

निर्णय शैली में प्रयुक्त D.M.S.S. में 48 कथन दिये गये हैं जो विद्यालयों के चार समस्या क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये चार–चार समस्या क्षेत्र हैं–

1. व्यवसायिक समस्याये (Enter Preneurial Problems)
2. प्रशासनिक समस्यायें (Administrative Problems)
3. शैक्षिक समस्यायें (Academic Problems)
4. व्यक्तिगत समस्यायें (Personel Problems)

सारणी संख्या–3.1

विभिन्न समस्या क्षेत्रों से चयनित एकांशों का वितरण

क्र. सं.	समस्या क्षेत्र	एकांश संख्या	प्रतिशत	कुल एकांशों की संख्या
1.	व्यवसायिक समस्यायें	1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12	25%	12
2.	प्रशासनिक समस्यों	13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24	25%	12
3.	शैक्षिक समस्यायें	25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36	25%	12
4.	व्यक्तिगत समस्यायें	37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48	25%	12
	योग–	**48**	**100%**	**48**

सम्बन्धित समस्या क्षेत्र से दिये गये कथनों के तीन तरह के उत्तर दिये गये हैं जो निर्णय प्रक्रिया के तीन शैलियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये निर्णय शैलियाँ इस प्रकार हैं–

1. नियमित निर्णय (Routine)
2. समझौतावादी निर्णय (Compromise)
3. अन्वेषणात्मक निर्णय (Heuristic)

उपकरण की विश्वसनीयता एवं वैधता

D.M.S.S. की विश्वसनीयता अर्धविच्छेद विधि द्वारा निकाली थी और अर्धविच्छेद विधि में स्पीयरमैन ब्राउन का सूत्र उपयोग किया गया था।

सारणी संख्या–3.2

चार समस्या क्षेत्रों के अर्धविच्छेद विधि द्वारा विश्वसनीयता तथा वैधता

क्र. सं.	समस्या क्षेत्र	विश्वसनीयता	वैधता
1.	व्यवसायिक समस्यायें	0.78	0.88
2.	प्रशासनिक समस्यों	0.88	0.94
3.	शैक्षिक समस्यायें	0.80	0.89
4.	व्यक्तिगत समस्यायें	0.98	0.99

इस प्रकार पूरे प्रश्नावली की विश्वसनीयता तथा वैधता 0.86 तथा 0. 92 है। परीक्षण एवं पुनः परीक्षण विधि द्वारा इस उपकरण की विश्वसनीयता 0.88 पायी गयी जिसे चार सप्ताह के अन्तराल पर दो बार प्रशासित किया गया था।

3.6 उपकरण का प्रशासन एवं प्रदत्तों का संकलन

शोधकर्त्ता ने सर्वप्रथम न्यादर्श में सम्मिलित 14 अनुदानित विद्यालयों तथा 16 गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों से अलग–अलग समय में सम्पर्क स्थापित किया और अपने शोध अध्ययन तथा परीक्षण के बारे में बताया कि इस उपकरण में विद्यालय के विभिन्न समस्या क्षेत्रों में समस्यात्मक प्रश्न लिये गये हैं जिस पर प्रधानाचार्य की प्रतिक्रिया के रूप में उसके तीन तरह के विकल्प प्रस्तुत किये गये हैं। जिनमें से किसी एक प्रश्न के लिए एक विकल्प का चुनाव करना है।

प्रत्येक प्रधानाचार्य को D.M.S.S. की एक प्रति देकर उनके दिये गये समय पर उपकरण को एकत्रित कर लिया। अन्त में धन्यवाद देकर आभार प्रकट किया।

ऑकडों के संग्रह के पश्चात प्रत्येक परीक्षण का फलांकन किया।

फलांकन

विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के प्रतिउत्तरों को 48 कथनों की प्रश्नावली को एकत्रित किया। जिनमें नियमित, समझौतावादी तथा अन्वेषणात्मक तीन प्रकार के उत्तर दिये गये हैं। प्रथम तरह का उत्तर नियमित प्रकार के, द्वितीय समझौतावादी तथा तृतीय अन्वेषणात्मक तरह के हैं। इस प्रकार 48 कथनों के प्रतिउत्तरों को प्रधानाचार्य द्वारा दिये प्रतिक्रिया के आधार पर प्रत्येक कथन को एक अंक प्रदान किये हैं। अधिकतम स्कोर के आधार पर प्रधानाचार्य को सम्बन्धित निर्णय शैली वाला माना है।

सारणी संख्या–3.3

D.M.S.S. की फलांकन विधि

क्र. सं.	समस्या क्षेत्र	कुल कथन	फलांकन विधि		
			नियमित	समझौतावादी	अन्वेषणात्मक
1.	व्यवसायिक समस्यायें	12	R	C	H
2.	प्रशासनिक समस्यों	12	R	C	H
3.	शैक्षिक समस्यायें	12	R	C	H
4.	व्यक्तिगत समस्यायें	12	R	C	H
	योग–	**48**			

3.7 आँकड़ों के विश्लेषण की प्रविधि

आँकडों के विश्लेषण के लिये शोधकर्त्ता ने प्रदत्तों के प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन तथा t मान ज्ञात करना।

(i) मध्यमान की गणना –

मध्यमान $(M) = \frac{\Sigma X}{N}$, जहाँ $\sum X$ = प्राप्तांकों का कुल योग

$\sum N$ = कुल संख्या

(ii) मानक–विचलन (S.D.) –

$$\sigma \text{ या } (S.D.) = \sqrt{\frac{\Sigma X^2}{N} - \left(\frac{\Sigma X}{N}\right)^2}$$

(iii) मानक त्रुटि –

$$\sigma_D \text{ या } S.E_{D} = \frac{\sigma}{\sqrt{N}} \text{ यदि } N > 30$$

$$\sigma_D \text{ या } S.E_{D} = \frac{\sigma}{\sqrt{N-1}} \text{ यदि } N < 30$$

(iv) t-मूल्य–

$$t = \frac{M_1 - M_2}{S.E_D}$$

प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं विवेचना

4.1 प्रस्तावना

अनुसंधान कार्य के लिए आँकड़ों को एकत्र करना उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि एक भवन निर्माण हेतु भवन निर्माण सामग्री को एकत्र करना है, जिस प्रकार भवन निर्माण सामग्री को उचित प्रकार से व्यवस्थित करने पर एक सुन्दर भवन का निर्माण संभव हो पाता है उसी प्रकार आँकड़ों को व्यवस्थित करके प्रस्तुत करने पर अध्ययन की गयी विशेषताओं का परिचय सुगमतापूर्वक हो जाता है।

आँकड़ों का विश्लेषण एक वैज्ञानिक निष्कर्ष पर पहुँचाता है तथा परिकल्पना के परीक्षण में सहायक सिद्ध होता है। विश्लेषण के अभाव में आँकड़ों की कोई उपयोगिता नहीं होती है।

4.2 परिकल्पनाओं का परीक्षण

प्रथम परिकल्पना का परीक्षण

H_1– माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के नियमित निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

HO_1–माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के नियमित निर्णय शैली में सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या–4.1

माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की नियमित निर्णय शैली के प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन तथा t का मान

क्र. सं.	चर (निर्णय शैली)	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	t मान	सार्थकता स्तर
1.	अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्य	14	4.28	3.57	4.04	0.01
2.	गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्य	16	12.35	6.73		

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि t का परिकल्पित मान 4.04 है जो सार्थकता स्तर 0.01 तथा df 28 के सारणीमान 2.67 से अधिक है अर्थात मध्यमानों में सार्थक अन्तर है। अतः शून्य परिकल्पना HO_1 अस्वीकृत तथा शोध परिकल्पना (H_1) स्वीकृत होती है अर्थात् माध्यमिक स्तर के अनुदानित/ सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के नियमित निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

द्वितीय परिकल्पना का परीक्षण

H_2– माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के समझौतावादी निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

HO_2– माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के समझौतावादी निर्णय शैली में सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या–4.2

माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यो की समझौतावादी निर्णय शैली के प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन तथा t का मान

क्र. सं.	चर (निर्णय शैली)	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	t मान	सार्थकता स्तर
1.	अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्य	14	17.14	3.37	3.57	0.01
2.	गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्य	16	21.00	2.09		

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि t का परिकल्पित मान 3.57 है जो सार्थकता स्तर 0.01 तथा df 28 के सारणीमान 2.67 से अधिक है अर्थात मध्यमानों में सार्थक अन्तर है। अतः शून्य परिकल्पना HO_2 अस्वीकृत तथा शोध परिकल्पना (H_2) स्वीकृत होती है अर्थात् माध्यमिक स्तर के अनुदानित/ सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के समझौतावादी निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

तृतीय परिकल्पना का परीक्षण

H_3– माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के अन्वेषणात्मक निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

HO_3–माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के अन्वेषणात्मक निर्णय शैली में सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या–4.3

माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यो की अन्वेषणात्मक निर्णय शैली के प्राप्तांकों का मध्यमान, मानक विचलन तथा t का मान

क्र. सं.	चर (निर्णय शैली)	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	t मान	सार्थकता स्तर
1.	अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्य	14	26.57	6.82	5.00	0.01
2.	गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्य	16	14.63	5.64		

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि t का परिकल्पित मान 5.00 है जो सार्थकता स्तर 0.01 तथा df 28 के सारणीमान 2.67 से अधिक है अर्थात मध्यमानों में सार्थक अन्तर है। अतः शून्य परिकल्पना HO_3 अस्वीकृत तथा शोध परिकल्पना (H_3) स्वीकृत होती है अर्थात् माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यो के अन्वेषणात्मक निर्णय शैली में सार्थक अन्तर है।

4.3 अध्ययन के परिणाम

प्रस्तुत अध्ययन के प्रशासन से प्राप्त हुए ऑकड़ों के विश्लेषण से निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए है।

1. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की अपेक्षा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यो ने नियमित निर्णय शैली के अधिक निर्णय लिये थे।
2. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की अपेक्षा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यो ने समझौतावादी निर्णय शैली के अधिक निर्णय लिये थे।
3. माध्यमिक स्तर के अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों ने गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यो की अपेक्षा अन्वेषणात्मक निर्णय शैली के निर्णय अधिक लिये थे।

4.4 परिणामों की व्याख्या

गैर अनुदानित विद्यालय के प्रधानाचार्यों ने अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की अपेक्षा नियमित निर्णय अधिक लिये क्योंकि उन विद्यालयों में निर्णय प्रक्रिया व्यक्ति प्रधान थी। वहां पर निर्णय अधिकांशतः औपचारिक था।

अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की अपेक्षा गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों ने समझौतावादी निर्णय अधिक लेते

पाये गये क्योंकि गैर अनुदानित विद्यालय के प्रधानाचार्य किसी भी व्यक्ति को चोट पहुँचाये बिना मानवीय मूल्यों को ध्यान में रखकर निर्णय लेते थे अर्थात किसी भी पक्ष को असन्तुष्ट न करने की उनकी प्रवृत्ति भी इसमें भूमिका निभाती है।

अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों ने गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की अपेक्षा अनवेषणात्मक निर्णय अधिक लेते पाये गये क्योंकि उन विद्यालयों में लोकतान्त्रिक वातावरण था तथा प्रत्येक व्यक्ति को निर्णय प्रक्रिया में शामिल किया जाता था।

अनुदानित सरकारी विद्यालयों के 14 में से 7–8 प्रधानाचार्यों ने अन्वेषणात्मक निर्णय लिये। पाँच प्रधानाचार्यों ने समझौतावादी एवं दो ने नियमित निर्णय दिये परन्तु गैर अनुदानित विद्यालयों के 16 प्रधानाचार्यों में से 10 ने समझौतावादी निर्णय लिये एवं चार प्रधानाचार्यों नें अन्वेषणात्मक तथा दो प्रधानाचार्यों ने नियमित निर्णय दिये जिनका वेन आरेख आगे दिया जा रहा है। इसीप्रकार अनुदानित सरकारी विद्यालयों के 70% अध्यापक प्रधानाचार्य के अन्वेषणात्मक निर्णय के पक्ष में रहे तथा 20% अध्यापकों ने समझौतावादी निर्णय और 10% अध्यापकों ने नियमित निर्णय का पक्ष लिया।

इसीप्रकार गैरअनुदानित विद्यालयों के अध्यापकों में से 80% अध्यापक प्रधानाचार्य के समझौतावादी निर्णय के पक्ष में दिखे परन्तु 20% अध्यापकों ने अन्वेषणात्मक एवं नियमित निर्णय का भी पक्ष लिया।

गैर अनुदानित विद्यालयों के प्रधानाचार्यों द्वारा लिए गये निर्णय का वैन आरेख
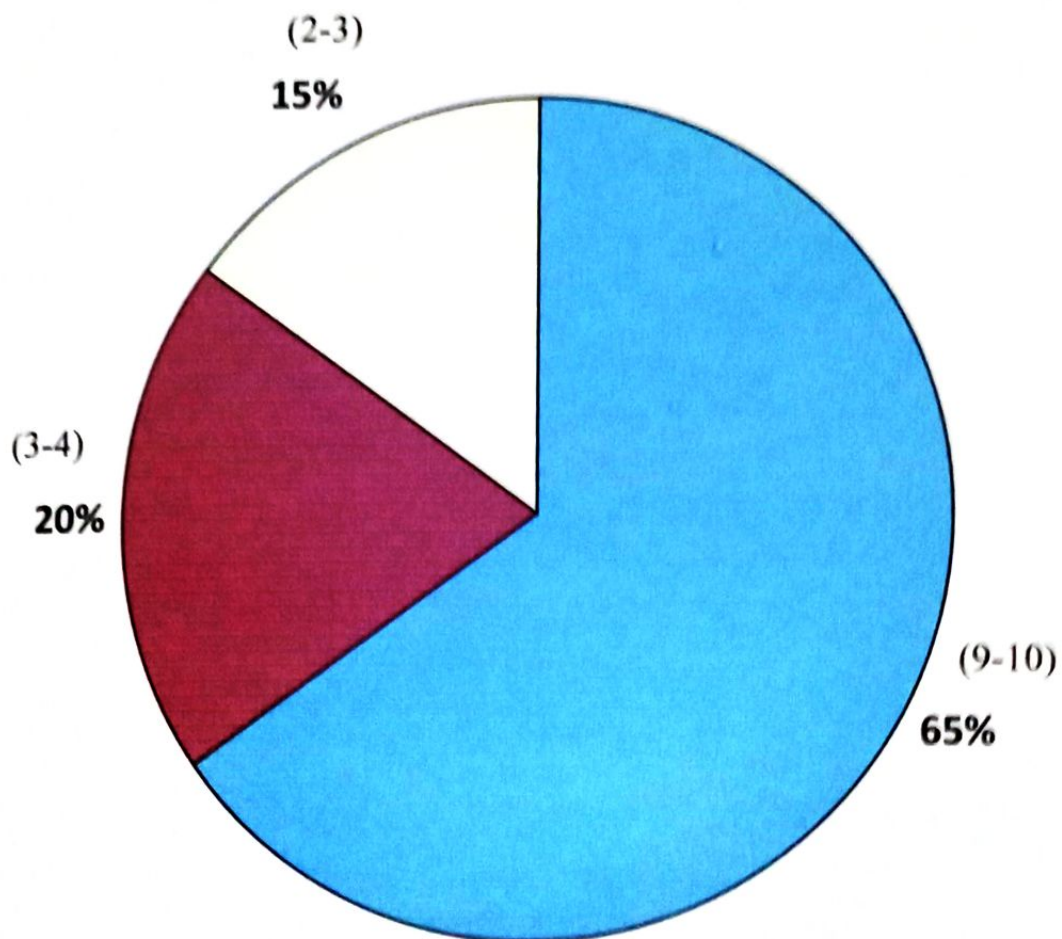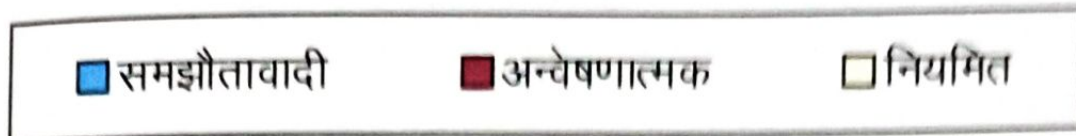
अनुदानित/सरकारी विद्यालय के प्रधानाचार्यों द्वारा लिए गये निर्णय का वैन आरेख
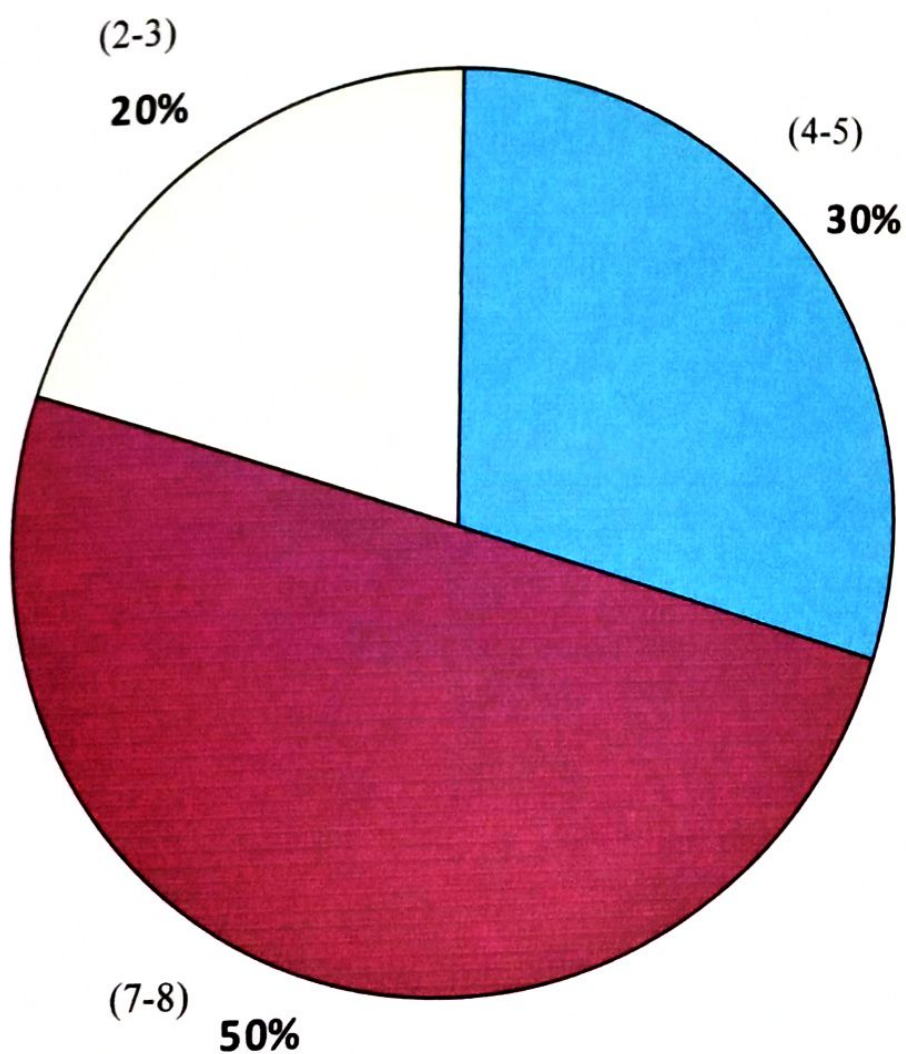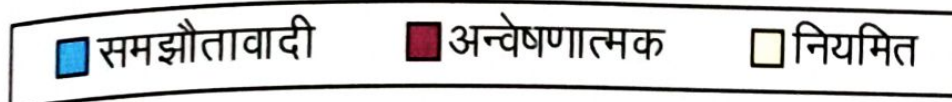
अनुदानित/सरकारी विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के निणर्य के सम्बन्ध में अध्यापकों के पक्ष का वैन आरेख
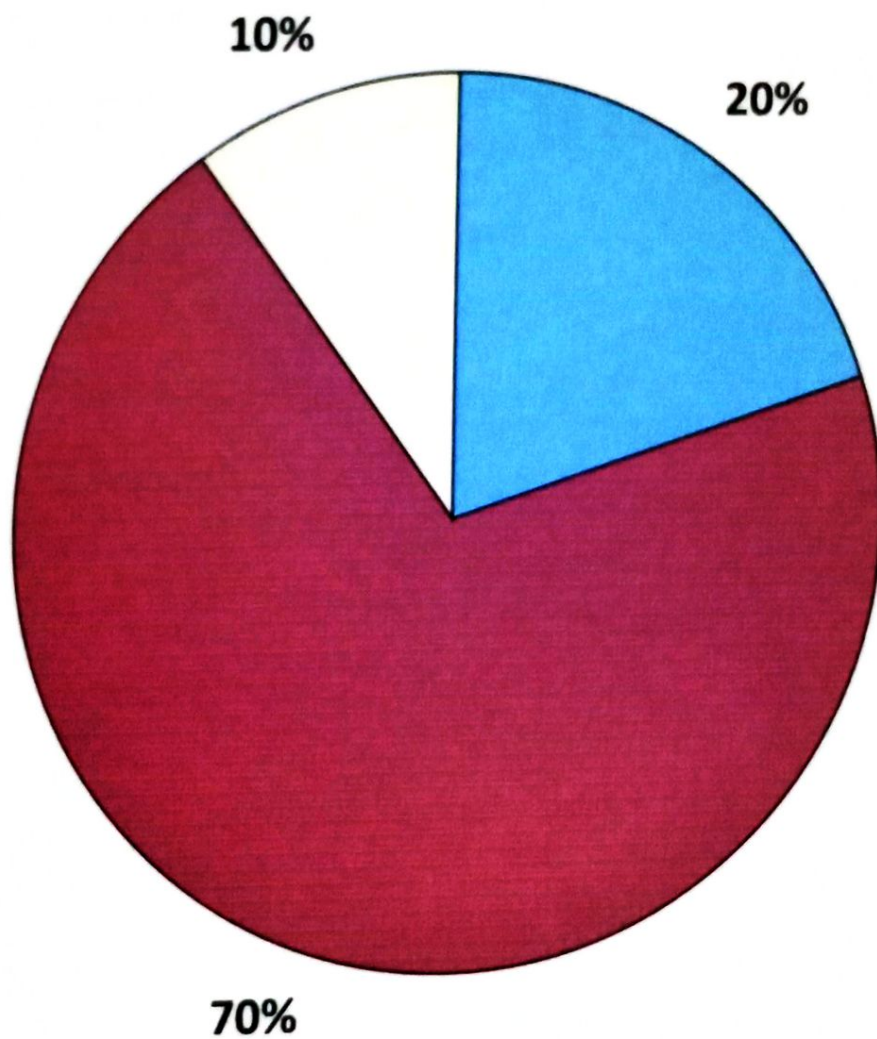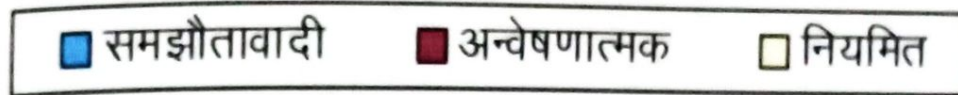
गैर अनुदानित/माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के निणर्य के सम्बन्ध में अध्यापकों के पक्ष का वैन आरेख
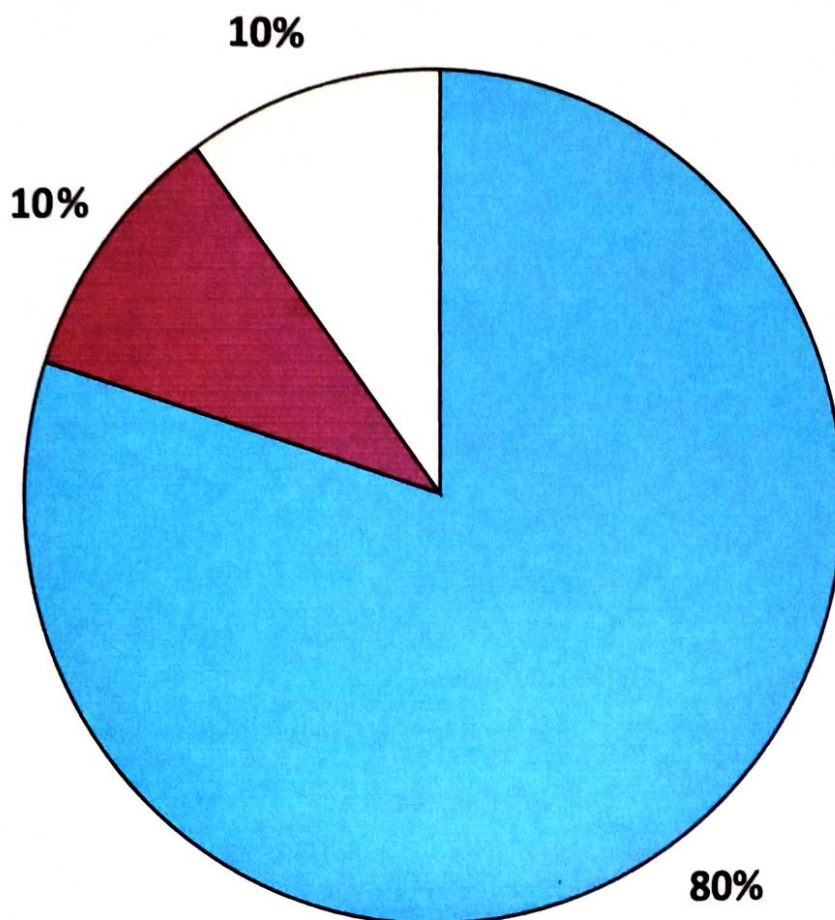
अध्याय-पंचम

निष्कर्ष, सुझाव एवं शैक्षिक निहितार्थ

5.1 अध्ययन का निष्कर्ष

5.2 अध्ययन का शैक्षिक निहितार्थ

5.3 भावी अध्ययन हेतु सुझाव

5.1 अध्ययन का निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के परिणामों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्य अपनी निर्णय शैली में समझौतावादी दृष्टिकोण को प्रमुखता देते हुए पाये गये। वही कुछ विषयों में उनकी शैली नियमित होने की प्रवृति पायी गयी। दूसरी ओर अनुदानित/सरकारी माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों की निर्णय शैली मुख्यतः अनवेषणात्मक प्रवृत्ति की पायी गयी परन्तु कुछ विषयों में वे समझौतावादी तथा नियमित दृष्टिकोण भी अपनाते पाये गये हलांकि ऐसा कम ही पाया गया।

5.2 अध्ययन का शैक्षिक निहितार्थ

समय के साथ समाज में परिवर्तन निरन्तर होते रहते हैं। शिक्षा संस्थाएं समाज की अंग हैं, अतः सामाजिक परिवर्तन के साथ ही इसकी आवश्यकताओं में भी परिवर्तन होते है। शिक्षा संस्थानों की सफलता इनके कुशल प्रबन्धन तथा प्रशासन पर निर्भर करती है और प्रबन्धन एवं प्रशासन युक्ति, संगत निर्णय शैली पर निर्भर करती है। इस अध्ययन के परिणामों को देखने से स्पष्ट होता है कि भिन्न–भिन्न प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के निर्णय शैली में बहुत अन्तर है। अधिकांश प्रधानाचार्य निर्णय प्रक्रिया को ठीक प्रकार से नहीं समझते, यद्यपि उन्हे दिन–प्रतिदिन के मामलों में निरन्तर निर्णय लेना पड़ता है। इस अध्ययन द्वारा प्रधानाचार्यों को निर्णय के प्रति उन्हें समस्याओं के सभी पहलुओं के प्रति

जागरूकता पैदा करना है, जिससे कि समस्या के सही निर्णय पर पहुँच सके। शिक्षा एक ऐसा उपक्रम है जिसमें कई प्रकार के लोग जुड़े होते है। संस्था के अन्दर प्रधानाचार्य, शिक्षक तथा शिक्षार्थी के पारस्परिक सम्बन्ध होते हैं, यद्यपि उनकी भूमिकाएं अलग-अलग होती है। अध्ययन द्वारा निर्णय प्रक्रिया में सभी व्यक्तियों की भूमिका को अवगत कराना जिससे अभीष्ट निर्णय की प्राप्ति हो सके तथा शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

निर्णय प्रक्रिया में उससे सम्बन्धित सभी व्यक्तियों की सहभागिता होनी चाहिए एवं विद्यालय में लोकतंत्र जैसा माहौल स्थापित करके सर्वोत्तम निर्णय लिया जाना चाहिए।

5.3 भावी अध्ययन हेतु सुझाव

किसी समस्या के कई पहलू होते हैं जिन पर अनुसंधान करने की आवश्यकता होती हैं, किन्तु किसी भी विशिष्ट समस्या से सम्बन्धित अध्ययन की कुछ सीमायें होती हैं। इसी कारण समस्या के प्रत्येक पक्ष को उसकी परिधि में शामिल करना सम्भव नहीं हो पाता। प्रस्तुत अध्ययन की समस्या के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। निर्णय शैली इतनी व्यापकता लिये हुए है कि सीमित समय वाले अनुसंधान कार्य को इसके प्रत्येक पक्ष पर गहन विचार या अध्ययन नहीं किया जा सका। अतः इसी परिप्रेक्ष्य में निर्णय शैली से सम्बन्धित कुछ प्रकरणों अथवा समस्याओं पर

सम्यक प्रकाश डालने हेतु भावी शोधकर्ताओं के लिये कतिपय सुझाव प्रस्तुत है।

1. निर्णय प्रक्रिया में निर्णयकर्ता के व्यक्तित्व, उसकी योग्यता एवं अनुभव उसकी निर्णय शैली को प्रभावित करते हैं। ऐसा लोगों का मत हैं, किन्तु सत्यता की पुष्टि के बिना इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। अतः इस प्रकरण पर ध्यान दिया जाय और देखा जाय कि उपयुक्त चर निर्णयकर्ता की शैली को प्रभावित करते हैं।

2. शिक्षा संस्थाओं का पर्यावरण उनके प्रशासन के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। ऐसी परिकल्पना की जाती है कि समृद्ध संस्थागत वातावरण और प्रभावी प्रशासन के मध्य उच्चकोटि का सार्थक सम्बन्ध होगा। इसके विपरीत दशा में दोनों के मध्य निम्नकोटि का सम्बन्ध होगा, किन्तु इस प्रकार के परिणाम कोरी कल्पना मात्र होगी जब तक कि इसे उपयुक्त उपकरणों अथवा परीक्षणों के माध्यम से जाँचा जा सके।

3. विद्यालयों की भौतिक सुविधाओं और उनकी निर्णय शैली में सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण विषय है यदि भौतिक सुविधाओं से सम्पन्न तथा इन सुविधाओं से वंचित विद्यालयों का गहन अध्ययन किया जाय तो इस प्रकरण को पूर्णतया समझा जा सकता है और इससे विद्यालयों की दशा सुधारने में सहायता मिलेगी।

4. एक अन्य प्रकरण जो अनुसंधान की दृष्टि से महत्वपूर्ण है वह है प्रधानाचार्य की निर्णय शैली तथा शिक्षकों एवं कर्मचारियों की कार्य

संतुष्टि एवं मनोबल के मध्य सम्बन्ध। शिक्षा संस्थाओं के परिप्रेक्ष्य में इस प्रकार के अनुसंधान की नितान्त आवश्यकता है।

5. प्रभावशाली अथवा अप्रभावशाली निर्णयकर्ताओं का उनकी आकांक्षा स्तर, कार्य सन्तुष्टि तथा समायोजन के संदर्भ में अध्ययन महत्वपूर्ण होगा।

संदर्भ सूची

संदर्भ सूची

1. आरचर अरनेस्ट बी., हाउ टू मेक ए बिजिनेस डेसीजन : ऐन एनेलिसिसि ऑफ थिअरी एण्ड प्रैक्टिस, मैनेजमेन्ट रिव्यू, फरवरी (1980), पृष्ठ 54–61।

2. बाजपेयी, ज्ञानेन्द्र नारायण (1993), विद्यालय की निर्णय प्रक्रिया का आलोचनात्मक अध्ययन, एम.एड. लघु शोध प्रबन्ध, कानपुर विश्वविद्यालय।

3. ब्रिजेज, ई.एम., टीचर पार्टिसिपेशन इन डेसीजन मेकिंग, द एडमिनिस्ट्रेटर नोट बुक, मई (1964), पृष्ठ–12।

4. ब्रिजेज, ई.एम. (1967), ए मॉडल फार शेयर्ड डेसीजन मेकिंग इन द स्कूल प्रिन्सिपलशिप, एडमिनिस्ट्रेशन क्वार्टरली –।।। संख्या–1, पृष्ठ–61।

5. ब्राउन डब्ल्यू. डेविड (1996), प्रिन्सिपल्स परसेप्शन ऑफ कम्यूनिटी एण्ड इनवाल्वमेन्ट इन शेयर्ड डेसीजन मेकिंग, जनरल्स ऑफ रिसर्च इन रूरल एजुकेशन ऑफ वी–12, एन–1 पृष्ठ–113

6. ग्लैथोर्न (1968), डेसीजन मेकिंग, गुप्ता घनश्याम लाल की पुस्तक सोशल इसूज इन एजुकेशन।

7. गणपति के.एस. (1982), ए स्टडी ऑफ डेसीजन मेकिंग प्रासेस इन रिलेशन टू इन्नोवेसन्स एण्ड चेन्ज इन एजुकेशन, एस.जू.यू. 1082 बुच.एम.बी. द्वारा संकलित, थर्ड सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी.।

8. ग्रिफिथ डैनियल ई. (1959), एडमिनिस्ट्रेटिव थ्योरी, अप्लेटन सेन्चुरी क्राफ्ट, न्यूयार्क।

9. कान्त एस. (1978), फैक्टर्स इन्फ्लूएसिंग डेसीजन मेकिंग परटेनिंग टू इण्डस्ट्रियल फंक्सनिंग ऑफ प्राइवेट एण्ड पब्लिक स्कूल्स, डिजर्टेशन एम.फिल. शिक्षा, मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ।

10. कृष्णराज, आर. (1987), आर्गेनाइजेशन स्ट्रक्चर, लीडरशिप विहैवियर एण्ड डेसीजन मेकिंग इन आटोनामस एण्ड अफिलिएटेड कालेजेज, पी–एच.डी. एजुकेशन, मद्रास यूनिवर्सिटी, बुच. एम.बी. द्वारा संकलित फोर्थ सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

11. लियांस, ई. जेम्स. (1987), ए स्टडी ऑफ पब्लिक स्कूल प्रिन्सिपल्स : डेसीजन मेकिंग एथारिटी एण्ड आटोनामी, जनरल आर्टिकल्स रिपोर्ट रिसर्च, कान्टेम्पोरेरी एजुकेशन, वी–58, एन–4, पी–199

12. लांगन, पोली ज्योसी (1992), स्कूल बेस्ड डेसीजन मेकिंग : फर्स्ट ईयर परसेप्सन ऑफ केन्चुकी टीचर, प्रिन्सिपल्स एण्ड काउन्सलर जनरल आर्टिकल्स, अर्बन एजुकेशन, वी–23, एन–1, पी–24

13. लिविंग स्टान, जे मार्था (1999), शेयर्ड डेसीजन मेकिंग वेलीपस एण्ड प्रैक्टिसेज ऑफ रूरल स्कूल प्रिन्सिपल्स, रूरल एजुकेशन, पी–21, एन–1, जनरल आर्टिकल्स, रिपोर्ट रिसर्च

14. मिलेट, जान.डी. (1974), स्ट्रेग्येनिंग कम्यूनिटी इन हायर एजुकेशन मैनेजमेन्ट डिवीजन एकेडेमी फार एजुकेशनल डवेलपमेन्ट, एलिन एण्ड वकेन इन्क, लन्दन।

15. मोहन्ती, पी.के. (1982), ए स्टडी ऑफ इफेक्ट ऑफ डेमोक्रेसी आन प्राइमरी एजुकेशन इन उड़ीसा, पी–एच.डी. थेसिस इन एजुकेशन, उत्कल विश्वविद्यालय, बुच. एम.बी. द्वारा संकलित थर्ड सर्वे आफ रिसर्च इन एजुकेशन, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

1.6. ओकेन्नर, सी. (1969), लीडरशिप इन अवर पब्लिक स्कूल्स, स्कूल एण्ड कम्यूनिटी, 55, 9।

17. ओवेन्स, रावर्ट जी. (1970), आर्गेनाइजेशन विहैवियर इन स्कूल्स, इंगिलवुड क्लिफ, प्रेन्टिस हास, इंक, पृष्ठ–90।

18. साइमन, एच.ए. (1944), डेसीजन मेकिंग एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव आर्गेनाइजेशन, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन रिव्यू, वाल्यूम 4, नं.–1, पृष्ठ–26।

19. शर्मा, आर.आर. (1997), स्टुडेन्ट पार्टिसिपेशन इन डेसीजन मेकिंग ऑफ हायर सेकेण्ड्री स्कूल्स, शिक्षा विभाग, कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर।

20. शर्मा, आर.आर. (1998), टीचर्स पार्टिसिपेशन इन डेसीजन मेकिंग ऑफ हायर सेकेण्ड्री स्कूल्स, शिक्षा विभाग, कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर।

21. शर्मा डी.के. (1982), ए स्टडी ऑफ मैनेजमेन्ट ऑफ एजुकेशन सिस्टम विद स्पेशल रिफरेन्स टू डेसीजन मेकिंग एण्ड आर्गेनाइजेशनल हेल्थ, पी–एच.डी. एम.एस.यू., बुच. एम.बी. थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी.।

22. सिंह, निर्मल, डेसीजन मेकिंग, यूनिवर्सिटी न्यूज, वाल्यूम–XXVI नं. –32, अगस्त 8, 1988, पृष्ठ–14।

23. त्यागी, आर.सी. (1978), एटीट्यूड आफ प्रिन्सिपल्स, टीचर्स एण्ड स्टूडेन्ट्स रिगार्डिंग स्टूडेन्ट्स पाटिसिपेशन इन एजुकेशन डेसीजन मेकिंग प्रासेस विद रिगार्ड टू देयर वैल्यूज, डिजर्टेशन, एम.फिल. शिक्षा, मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ।

24. टेवेल जे. केनीप (1988), द वेस्ट स्टडी चाइल्ड आई इयर हाडः टीचर इन्फ्लूएन्स आन डेसीजन मेकिंग ऑफ थ्री अर्बन हाईस्कूल प्रिन्सिपल्स, जनरल आर्टिकल्स, अर्बन एजुकेशन, वी–23, एन–1, पी–142

25. वर्मा, जे.पी. (1974), ए कम्परेटिव स्टडी ऑफ एडमिनिस्ट्रेटिव प्राबलम्स ऑफ सिंगिल एण्ड डबुल शिफ्ट सेकेण्ड्री स्कूल इन राजस्थान, पी–एच.डी. एजुकेशन, उदयपुर यूनिवर्सिटी।

26. वर्मा, एस.एस. (1978), इनफ्यूएन्स ऑफ परसोनेलिटी एण्ड इन्स्टीट्यूशनल फैक्टर्स आन डेसीजन मेकिंग, डिजर्टेशन, एम.फिल. शिक्षा, मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ।